SVB Library

श्रीछिन्नमस्ता नित्यार्चन

(पञ्चाङ्ग-सहित)

ST-47

श्री छिन्नमस्ता नित्यार्चन

(पञ्चाङ्ग-सहित)

★★★

लेखक

'राष्ट्र-गुरु' श्री १००८ श्री स्वामीजी महाराज

श्रीपीताम्बरा-पीठ, दतिया (म०प्र०)

मन्दिर पुस्तकालय
१५८

प्रकाशक
कल्याण मन्दिर प्रकाशन
अलोपीबाग मार्ग, इलाहाबाद—२११००६

तीसरा संस्करण,

कार्तिक पूर्णिमा २०५१ वि०, १८-११-९४

श्री छिन्नमस्ता-पूजा-यन्त्र

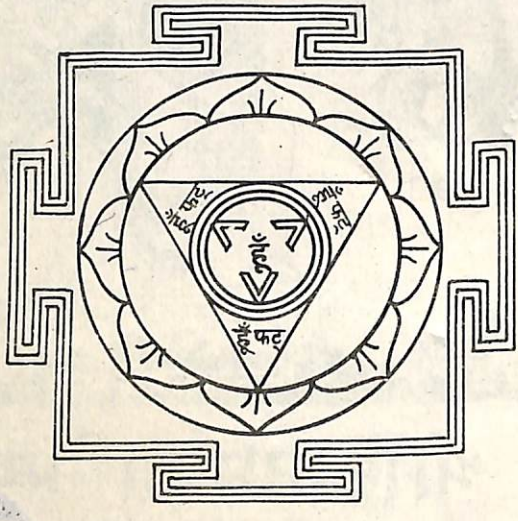

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग
इलाहाबाद—२११००६

अनुक्रमणिका

प्राक्कथन	...	१-२६
प्रातः कृत्य	...	२६-२८
१ गुरु-स्मरण	...	२६
२ पर-देवता-स्मरण	...	२८
स्नान और सन्ध्योपासना	...	२९-३१
१ स्नान	...	२९
२ सन्ध्योपासन	...	३०
नित्यार्चन	...	३२-६६
१ द्वार-पूजा	...	३२
२ पूजा-गृहादि-शोधन	...	३३
३ भूत-शुद्धि	...	३४
४ प्राण-प्रतिष्ठा	...	३६
५ बहिर्मातृका-न्यास	...	३७
६ मूलमन्त्र-प्राणायाम	...	४०

७ मन्त्राचमन ... ४०
८ वीज-न्यास ... ४१
९ इष्ट-पूजा का प्रारम्भ ... ४१
१० षोडशोपचार-पूजन ... ५२
११ आवरण-पूजन ... ५९
१२ मन्त्र-जप आदि ... ६४
१३ विसर्जन ... ६५
परिशिष्ट ... ६७-९९
१ ब्रह्म-कृतं छिन्नमस्ता-स्तोत्रम् ... ६७
२ त्रैलोक्य-विजय कवचम् ... ६९
३ अष्टोत्तर-शत-नाम स्तोत्रम् ... ७३
४ श्री छिन्नमस्ता-क्रम-मन्त्राः ... ७५
५ श्री छिन्नमस्ता हृदय स्तोत्रम् ... ७८
६ श्री छिन्नमस्ता सहस्रनाम ... ८१

प्राक्कथन

तामग्नि-वर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्म-फलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवीं शरणमहं प्रपद्ये सुतरां नाशयते तमः ॥ (दे० ४)

अग्नि के समान रक्त-वर्ण वाली, तप से सदैव प्रज्वलित, कर्म-फल की इच्छावाले साधकों से सेवित, वैरोचनी दुर्गा देवी के शरण जाता हूँ, जो कि अज्ञानान्धकार को अपने आप नाश कर देती हैं, या जिसके प्रभाव से अज्ञान स्वयमेव नष्ट हो जाता है।

श्री आचार्य क्षेमराज शक्ति-सूत्र 'प्रत्यभिज्ञा-हृदय' में शक्ति-पदार्थ का लक्षण करते हुये कहते हैं—

चितिः स्वतन्त्रा विश्व-सिद्धि-हेतुः (प्र० ६)

जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और संहार की सिद्धि 'चिति' महाशक्ति द्वारा ही होती है, और वह स्वतन्त्र है। महाशक्ति के अनुग्रह और तिरोधान ये दो कृत्य तन्त्रों में और भी माने गये हैं; इसलिये उसे 'पञ्च-कृत्य-कारिणी' भी कहते हैं। अनुग्रह, तिरोधान को बन्ध और मोक्ष-पद से कहा जाता है, समस्त सिद्धियों का हेतु वह महाशक्ति ही है, क्योंकि योगी उसकी

कृपा से ही सिद्धियों को पाता है; यह दूसरा अर्थ भी सूत्र का किया जाता है। सारा विश्व उसी का परिणाम है। सभी पदार्थ उसी से विकसित हो रहे हैं। सबमें उसी की सत्ता है, और सब वही है। यह शाक्त-दर्शन का अन्तिम निर्णय है। इस तत्त्व का साक्षात् करने के लिये साधना-पद्धतियों का निर्माण महर्षियों ने किया है। उनमें भिन्न-भिन्न उसके रूप और प्रकार नियत किये गये हैं, तथापि मुख्यतः साधक महापुरुषों ने दस रूपों में उसकी पूर्ण विभूति का अनुभव करके कृतकृत्यता लाभ किया है; जिन्हें 'तन्त्रसार' में इस प्रकार कहा गया है—

काली तारा (छोड़ी) महाविद्या भुवनेश्वरी।
भैरवी छिन्नमस्ता च, विद्या धूमावती तथा॥
बगला सिद्ध-विद्या च, मातङ्गी कमलात्मिका।
एता विद्या महेशानि, महाविद्या प्रकीर्तिताः॥

ये सभी रूप एक ही के हैं।

प्रस्तुत निबन्ध में श्री भगवती छिन्नमस्ता जी के विषय में यथा-ज्ञान जिज्ञासु साधकों के लिये कुछ निवेदन किया जा रहा है। श्री जगदम्बा के इस रूप का बहुत ही रहस्यमय स्वरूप है। इनकी साधना-पद्धति एवं इनके साधक बहुत ही दुर्लभ हैं। अतः यत्-

किंचित् उपलब्ध शास्त्रीय वचनों के आधार पर ही यह लेख लिखा जा रहा है; यद्यपि श्री पण्डित रमादत्त जी शुक्ल का कथन विस्तृत रूप में लिखने का है; तथापि उक्त परिस्थिति को देखते हुए समास में ही व्यास को समझना उचित होगा।

शक्ति-साधना में मुख्य रूप से दो क्रम माने जाते हैं—सृष्टि एवं संहार। स्थिति-क्रम सृष्टि के ही अन्तर्गत है। उक्त दसों रूपों का सृष्टि एवं संहार में अन्तर्भाव होने से दो ही प्रकार साधना के माने जाते हैं, जिन्हें काली-कुल एवं श्री-कुल कहते हैं। श्री भगवती छिन्नमस्ता की गणना काली-कुल में की जाती है। यद्यपि काली, तारा, षोडशी के भेद से तीन क्रम माने जाते हैं तथापि श्री तारा और काली में भेद न होने से ऐक्य स्थापन किया गया है—

काली महाकालमलं ग्रसन्तीम्।

—भावोपहार की टीका।

महाकाल-रूप अहम्।

प्रत्यय को भी अन्त में ग्रस लेनेवाली काली है। तारा के शिव को 'अक्षोभ्य'-नाम से कहते हैं, क्योंकि 'अहम्' के ग्रास होने पर ही अक्षोभ्यावस्था प्राप्त होती है। अहमाकार-समष्टि-क्षोभ से ऊपर यह

अवस्था है। अतः, श्री तारा के मस्तक में इनका पूजन होता है। 'तारा-कर्पूर' में अक्षोभ्य को महाकाल ही कहा गया है।

महाकालेनोद्यत्पुलक-निचयां स्मेर-वदनाम् (१६)

श्री तारा एवं छिन्नमस्ता जी का बीज 'हूँ' है। इन दोनों की पूजा-पद्धति—आराधना-क्रम प्रकृति-विकृति-न्याय से एक ही है। श्री तारा का पूर्ण क्रम होने से श्री छिन्नमस्ता जी का इन्हीं में अन्तर्भाव माना जाता है; 'शक्तिसङ्गम' में यह विषय स्पष्ट है। 'श्री भैरव तन्त्र' में इनके विषय में कहा है—

प्रचण्ड-चण्डिकां वक्ष्ये, सर्व-काम-फल-प्रदाम्।
यस्याः स्मरण-मात्रेण, सदाशिवो भवेन्नरः॥
अपुत्रो लभते पुत्रमधनो धनवान् भवेत्।
कवित्वं दीर्घ-पाण्डित्यं, लभते नात्र संशयः॥

अर्थात् प्रचण्ड-चण्डिका श्री छिन्नमस्ता का वर्णन किया जाता है, जिनकी आराधना से साधक जीव-भाव से रहित होकर शिव हो जाता है, तथा पुत्र, धन, कविता, पाण्डित्य आदि ऐहिक विषय भी उसे प्राप्त हो जाते हैं; अर्थात् साधक इच्छानुसार जो चाहता है, उसे वही प्राप्त होता है।

इनके आविर्भाव की कथा इस प्रकार कही जाती है—

एक समय अपनी सहचरी जया-विजया के साथ श्री भवानी मन्दाकिनी में स्नान करने गईं। वहाँ स्नान करने पर कामाग्नि से पीड़ित होकर वह जगदानन्दकारिणी कृष्ण-वर्ण की हो गईं। उस समय सहचरियों ने उनसे कुछ भोजन करने को माँगा क्योंकि वे क्षुधार्त थीं। देवी ने उन्हें प्रतीक्षा करने को कहा। पुनः याचना करने पर भी प्रतीक्षा करने को ही कहा। तब उन सहचरियों ने विनम्र मधुर स्वर में फिर कहा कि "माता प्रार्थना करने पर अपने शिशुओं को अवश्य ही भक्ष्य-भोज्य देती है, क्योंकि वह दयामयी होती है, इसलिये अवश्य ही कुछ भोजन देना चाहिये।" इस प्रकार उनके मधुर वचन सुनकर कृपावती देवी ने कराग्र से अपने शिर का छेदन कर दिया। छिन्न-शिर श्री देवी के बायें हाथ पर आ गिरा और उनके कबन्ध से तीन धारायें बह निकलीं। दो धारायें उनकी सहचरी डाकिनी और वर्णिनी के मुख में प्रवाहित होने लगीं और तीसरी धारा कहे हुए अपने शिर से स्वयं पान करने लगीं। तभी से उस समय के स्वरूप की 'छिन्नमस्ता'—संज्ञा हुई। इसी से मिलती-जुलती और भी कथायें प्रचलित हैं।

(प्रा० तो०, पृ० ७२८)

योग-सिद्धि की चरम सीमा का निर्देश इस कथा में किया गया है। योग-शास्त्र में तीन ग्रन्थियाँ बताई गई हैं, जिनके भेदन पर योगी को पूर्णता लाभ होती है, जिन्हें ब्रह्म-ग्रन्थि, विष्णु-ग्रन्थि और रुद्र-ग्रन्थि के नाम से कहा गया है। मूलाधार में ब्रह्म-ग्रन्थि, मणि-पूर में विष्णु-ग्रन्थि एवं आज्ञा में रुद्र-ग्रन्थि का स्थान है। इनके भेदन पर ही अद्वैतानन्द का अनुभव होकर पूर्णानन्द-रूप मुक्ति की प्राप्ति होती है। ब्रह्म, विष्णु ग्रन्थियों के भेद होने पर भी साधक के अन्दर रहे हुए अहङ्कार का पूर्ण रूप से अभाव न होने से पुनः संसार में उसे आना पड़ता है। क्षुद्र अहन्ता का विलय परा-हन्ता में रुद्र-ग्रन्थि के भेदन पर ही होता है। महाशक्ति कुण्डलिनी चित्रा, वज्रा और ब्रह्म-नाड़ी के साथ आज्ञा-चक्र को भेद कर वज्रा नाड़ी में से प्रवाह करती है, तब यह कार्य सम्पन्न होता है; इसे ही कपाल-भेद भी कहते हैं। इसके पश्चात् ही शिव की समस्त सिद्धियाँ योगी को प्राप्त होती हैं तथा सोम-सूर्यात्मक समस्त जगत् का पोषण भी उससे होता है। इस मार्ग में काम सबसे बड़ा अवरोधक होता है, जिसका सङ्केत उक्त कथा में किया गया है। श्री भगवती के ध्यान में भी विपरीत रति-युक्त काम का स्वरूप बताया गया है—

'अस्थि-माला-धरां देवीं, नाग-यज्ञोपवीतिनीं ।
रति-कामोपविष्टां च, सदा ध्यायन्ति मन्त्रिणः ॥'
'विपरीत-रतासक्तौ, ध्यायेद्रति-मनोभुवौ ।'

योगियों का ऐसा अनुभव है कि मणिपूर-चक्र के नीचे की नाड़ियों में ही काम एवं रति का मूल है। उसी पर छिन्ना-महाशक्ति आरूढ़ है। नीचे के प्रवाह में ही रति एवं काम अनर्थ को उत्पन्न करते हैं, जिनमें सारा संसार बहा जा रहा है। उसके वैपरीत्य अर्थात् ऊर्ध्व प्रवाह होने पर ही रुद्र-ग्रन्थि का भेद होता है। कुलाचार के पञ्चम मकार का भी यही रहस्य है। जितने सिद्ध योगी हुए हैं, वे सब इसी बड़ी घाटी के पार करने पर पूर्ण सिद्ध हुए हैं। इसीलिये योगी गोरखनाथ ने अपनी गोरक्ष-संहिता में कुण्डलिनी शक्ति के इसी ध्यान को बताया है—

नाभौ शुक्लारविन्दं तदुपरि विमलं मण्डलं चण्ड-रश्मेः,
संसारस्यैक-रूपां त्रि भुवन-जननीं धर्म-वात्रीं नराणाम् ।
तस्मिन् मध्ये त्रिमार्गे त्रितमतनुधरां छिन्नमस्तां प्रशस्तां,
तां वन्दे ज्ञान-रूपां मरण-भय-हरां योगिनीं योगमुद्राम् ॥
(गो० प० २—७६)

अर्थात् नाभि-प्रदेश में शुभ्र-वर्ण पद्म और उस पर निर्मल सूर्य-मण्डल का चिन्तन कर उसमें संसार की सारभूत त्रिभुवन-जननी, धर्म-काम और दाय-

सम्पन्न प्रशस्ता, ज्ञान-रूपा, जन्म-मरण के भय को दूर करनेवाली योग-मुद्रा योगिनी छिन्नमस्ता देवी की मैं वन्दना करता हूँ।

इसी विषय में 'उमा सहस्रम्' नामक श्री भगवती के एक उत्कृष्ट काव्य में ऐसा कहा गया है—

तव च्छिन्नं शीर्षं विदुरखिल-धान्यागम-विदो ।
मनुष्याणामस्ते बहुल-तपसा यद्-विदलिते ॥
सुषुम्नायां नाड्यां तनु-करण-सम्पर्क-रहिता बहिः ।
शक्त्या युक्ता विगत चिर-निद्रा विलससि ॥
—सप्तमे स्तवके, ३—२१

हे जगद्धात्रि, आगम-वेत्ता तान्त्रिक लोग आपको छिन्नमस्ता-रूप से जानते हैं क्योंकि दीर्घकाल तक तप के अनुष्ठान से विदलित दो भागों में विशीर्ण मनुष्यों के मस्तक-प्रदेश में ज्योतिर्वाहिनी सुषुम्ना-नाड़ी में देहेन्द्रियादि-सम्बन्ध-वर्जित अर्थात् निर्लेप होती हुई शरीर से बाहर ब्रह्माण्ड-गत महाशक्ति से युक्त सदैव जाग्रत् रूप में योगी के शरीर में कुण्डलिनी-रूप में विलास करती हो, अर्थात् योगियों में कुण्डलिनी के प्रबुद्ध होने पर सुषुम्ना में प्रवाह कर शरीर के सम्बन्ध से रहित होकर शीर्ष-कपाल को भेद कर ब्रह्माण्ड में व्यापक महाशक्ति से एक होकर विलास करती हो।

इसके आगे श्लोक के टीकाकार विद्वद्वर श्री कपाली शास्त्री लिखते हैं कि—'जीते हो योगी का शीर्ष-कपाल-भेद अनुभव-सिद्ध है—'

व्यपोह्य शीर्ष-कपाले ।

इस 'तैत्तरीयारण्यक श्रुति' से प्रमाणित किया है । 'कठोपनिषद्' में—

विद्यामेतां योग-विधिं च कृत्स्नम् ।

ब्रह्म-विद्या और सम्पूर्ण योग-विधि को नचिकेता ने यम से प्राप्त किया । इस प्रसङ्ग में योग-विधि-रूप से यही तत्त्व लिया गया है—

शतं चैकाहृदस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभि निः-सृतैका । तयोर्ध्वमापन्नमृतत्त्वमेति विष्वङन्या उत्क्रमणे भवन्ति'

हृदय की एक शत नाड़ियों में एक नाड़ी मूर्धा को भेदकर ब्रह्म-लोक को गई है । उसी से उत्क्रमण होने पर मुक्ति होती है । अन्य नाड़ियों द्वारा उत्क्रमण पुनरावृत्ति का हेतु है । उक्त तान्त्रिक छिन्नमस्ता-साधना का यह वैदिक रूप है । यह बात प्रसिद्ध है कि शाक्त-साधना मुक्ति और भुक्ति दोनों को ही समान रूप से एक साधकावच्छेदेन स्वीकार करती है । इसी के अनुसार उक्त मन्त्र की व्याख्या श्री

आचार्य भगवत्पाद ने की है—

ब्रह्मणा वा सह कालान्तरेण मुख्यममृतत्त्वमेति भुक्त्वा भोगाननुपमान् ब्रह्म-लोक-गतान् ।।

(क० अ० २-१६)

ब्रह्म-लोक में गया हुआ साधक ब्रह्म-लोक के अनुपम भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष को प्राप्त करता है। संक्षिप्त रूप से यह यौगिक सिद्धान्त ही विस्तार में श्रीछिन्नमस्ता भगवती की आराधना का तन्त्र है। महर्षि याज्ञवल्क्य, भगवान् परशुराम आदि दिव्य महापुरुष इनके साधक थे। महर्षि याज्ञवल्क्य ने जनक की सभा में शाकल्य का मूर्धा-पात इसी शक्ति द्वारा किया था। श्री भगवान् परशुराम ने अपने पिता की आज्ञा से अपनी माता का शिरश्छेद किया था। उनकी माता श्री रेणुका के सती होने से श्री छिन्नमस्ता के तेज ने उनमें प्रवेश किया। अतः, रेणुका का भी साधन-पूजन होता है। बृहदारण्यक में कही गई मधु-विद्या अश्व-शिरवाले दध्यङ्ङाथर्वण ऋषि से जिसका उपदेश दिया गया है, वह यही है। श्री भागवत में एवं श्री देवी भागवत में हयग्रीव-विद्या भी यही है। प्राचीन वैदिक ऋषि इसे इसी रूप में मानते थे। श्री मत्स्येन्द्रनाथ, श्री गोरखनाथ आदि महा-सिद्ध महात्मा इसी महा-शक्ति के आराधक थे। अर्थ, काम

को लक्ष्य करके दैत्य-राक्षसों में भी यह साधन रहा है। हिरण्यकशिपु, वैरोचन आदि भी इस शक्ति के एक-निष्ठ साधक थे, इसीलिए इन्हें 'वज्र-वैरोचनीया' भी कहते हैं। वास्तव में वैरोचन नाम अग्नि का है; अग्नि के स्थान मणिपूर में इसका ध्यान किया जाता है। वज्रा-नाड़ी में प्रवाह होने से इनकी 'वज्र-वैरोचनीया' इस नाम से साधकों में प्रसिद्धि है—

वैरोचनीं कर्म-फलेषु जुष्टाम्।

इस मन्त्र में यही बात कही गई है; क्योंकि कर्म-फल अग्नि द्वारा ही प्राप्त होता है। अर्वाचीन काल में तथागत बुद्ध इसी साधना से मार को जीत पाये थे, इसीलिये उनका एक नाम वैरोचन बुद्ध भी है; यह वज्रयान के ग्रन्थों में मिलता है। गुह्य-समाज तन्त्र में लिखा है—

एवं मया श्रुतं एकस्मिन् समये भगवान् सर्व-तथागतः काय-वाक्-चित्-हृदय-वज्र-योषिद् भगेषु विजहार (पृ० १)

इससे सिद्ध है कि बुद्ध तान्त्रिक साधक थे। 'हूँ' बीज श्री तारा एवं श्री छिन्नमस्ता का माना जाता है, इसका निरूपण उक्त तन्त्र में किया है। श्री जलन्धर-पीठ में वज्रेश्वरी (श्री तारा) की पूजा होती

है। कांगड़ा का भवन इस नाम से प्रसिद्ध है। श्री छिन्नमस्ता का पीठ 'चिन्त्यपूरणी' नाम से उक्त पीठ में प्रख्यात है। शीत-काल में अनेक बौद्ध-मतानुयायी तिब्बत से श्री भगवती के दर्शनार्थ वहाँ आते हैं। इनके आराधन का क्रम 'चीनाचार' एवं 'दिव्य चीनाचार' के नाम से उन लोगों में प्रचलित है। ब्राह्मणों के आधुनिक तन्त्रों के संग्रह-ग्रन्थों में इनका भी नाम है तथापि इसका आचरण वही लोग करते हैं।

बहुत से आधुनिक विचारक इस बात को नहीं मानते हैं कि बुद्ध तान्त्रिक थे और बौद्धों में तन्त्र-मन्त्र की मान्यता थी। जैसे 'गङ्गा' के पुरातत्व-विशेषांक में श्री महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने अपने लेखों में लिखा है कि 'बुद्ध के निर्वाण के १०० वर्ष पश्चात् मन्त्र-तन्त्र का प्रचार बौद्धों में होने लगा।' भैरवी-चक्रादि बहुत पहले से ही प्रचलित थे, जिन्हें विदेशी में भी लोग मानते थे, इत्यादि यह मार्ग रहस्य का है। प्रत्येक व्यक्ति तथा सामान्य जनता में इसे प्रकट नहीं किया जाता है; इस मार्ग के लोगों का जीवन सर्वथा रहस्य-मय ही होता है, इसलिये बुद्ध ने अपने कतिपय ही शिष्यों को इसे बताया हो। अन्यथा प्रधान सम्प्रदाय महायान में वज्रयान का विपुल प्रचार होना, यह कोई साधारण बात नहीं है। आगे

चलकर राहुल जी ने यह माना है कि बुद्ध के निर्वाण के ४०० वर्ष पश्चात् मन्त्र, हठ और मैथुन बुद्ध-धर्म में प्रविष्ट हो गये, पर यह नहीं बताया कि ये बातें कहाँ से आकर प्रविष्ट हुईं। ये बातें शाक्त लोगों में प्रचलित थीं, वहीं से बौद्धों में आईं। बौद्ध धर्म तो सर्वदा इन बातों का विरोधी है। तथागत अहिंसा के उपदेष्टा होते हुए भी मांसाहारी थे। यह 'महा-परि-निव्वाण-सुत्त' में लिखा है कि शूकर का मांस खाने से उनका देहान्त हुआ था। चमत्कार भी बताते थे, जैसे सूखी नदी में पानी बहा देना आदि शाक्त-धर्म की चीज है। इससे सिद्ध है कि बुद्ध तान्त्रिक थे। कितने लोग यह भी मानते हैं कि बौद्ध-तन्त्रों के अनुकरण पर ही शाक्तों के तन्त्र बने हैं, तथापि यह निराधार है

शाक्तों के तन्त्रों का आधार पञ्च-ब्रह्म-मन्त्र हैं, जिनका उल्लेख कृष्ण यजुर्वेद की काष्ठा, तैत्तरीय, मैत्रायणी आदि शाखाओं में है, जिन्हें सद्योजात, वाम-देव, अघोर, तत्पुरुष और ईशान कहते हैं। भगवान् शिव के ये पाँचों मन्त्र-मय मुख कहे जाते हैं। इन्हीं से शैवागम एवं शाक्तागमों का विस्तार हुआ है, जिसे परशुराम-कल्पसूत्रों में कहा है। भगवान् परमशिव

ने श्रुति आदि अष्टादश विद्या सर्व-दर्शन लीला-न्याय से बनाकर संविन्मयी श्री भगवती के पूछने पर अपने पञ्चमुख से पञ्चाम्नायों को कहा (परशु २)। इन्हीं पाँचों मन्त्रों पर पञ्चाध्यायात्मक पाशुपत सूत्रों की रचना कर शैव धर्म का विस्तार किया गया है। ये मन्त्र शैवों एवं शाक्तों को समान रूप से मान्य हैं। शैवों ने अपने ग्रन्थों में शाक्तों को भी शैव ही बताया है। वीर शैवों ने इन्हीं पाँचों मन्त्रों से अपने पञ्चाचार्यों की कल्पना की है, जिन्हें रेणुक, दारुक, चंकुकर्ण, धेनुकर्ण और विश्वकर्ण कहते हैं। बुद्धों की 'पञ्च-बुद्ध' कल्पना भी इसी का अनुकरण है—

जिनो बैरोचनः ख्यातो रत्न-सम्भव एव च।
अमिताभोऽमोघसिद्धि रक्षोभ्यश्च प्रकीर्तितः॥

जैसे सद्योजातादि का दिशा-क्रम है, ऐसा ही बुद्धों का भी है। पूर्व में 'वैरोचन', दक्षिण में 'अमिताभ', पश्चिम में 'रत्नसम्भव', उत्तर में 'अमोघसिद्धि' एवं ऊपर में 'अक्षोभ्य' बुद्ध माने जाते हैं। 'विरोचन बुद्ध' एवं 'अक्षोभ्य' बुद्ध का सम्बन्ध वज्रयान से है, जिन्हें छिन्ना एवं तारा शक्ति के सम्बन्ध में बताया गया है। विरोचन ही विकराल शिव का नामान्तर है। अहिंसा-धर्म के प्रचारक बुद्ध-धर्म में बलिदान, श्मशान-सेव-

नादि क्रियायें शाक्त-धर्म से ही गई हैं। ज्ञान-सिद्धि, प्रज्ञोपाय विनिश्चय ग्रन्थ में इनका वर्णन स्पष्ट रूप में किया गया है। ऐसी अवस्था में यह कहना कि बौद्ध-तन्त्रों के अनुकरण पर शाक्त-तन्त्र बने, उपहासास्पद ही है।

अनेक शाक्त-ग्रन्थों में बौद्ध-जैनादि तन्त्रों का उल्लेख मिलता है जैसे षडायतन पूजन में। चार्वाक्-जैन-बौद्ध-दर्शन भी लिये गये हैं। इसका कारण शाक्त तान्त्रिकों की समन्वयात्मक दृष्टि है, इसलिये यह भी ले लिया है। जैसे पुराणों में वृहस्पति, ऋषभ एवं बुद्ध को भी भगवदवतार मान लिया है, तथापि उनका आचार कहीं भी नहीं लिया है। यह बाद की कल्पना है। बौद्ध-तन्त्र 'साधन-माला' में वज्रयोगिनी-साधना में पृष्ठ ४५३ पर कहा गया है—

ओडियान-पूर्णगिरि-कामाख्या-सिरिहट्ट इत्यनेन पूजयेत् ॥

ओड्डियान, पूर्णगिरि, कामाख्या, श्रीहट्ट आदि पीठों को बौद्धों ने मान लिया है। ये पीठ-स्थान शाक्त-मत के प्रमुख साधना-स्थल हैं, बुद्ध-धर्म से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है। बुद्ध ने अपने शिष्यों को शाक्त-अर्चा का निषेध किया था, ऐसा भी प्रमाण मिलता है।

तथापि अयोग्य और अनधिकारियों को ही उन्होंने ऐसा किया था, क्योंकि लोकोत्तर वस्तुओं को प्रदान करनेवाली इस अर्चा से दुरुपयोग होकर अनर्थ की भी पूर्ण सम्भावना है, इसे बुद्ध जानते थे।

अहिंसा-धर्म का समर्थक जैन-धर्म भी 'पञ्चणमोकार-' मन्त्र को मानता है। जैन-दर्शन नामक पुस्तक में पाँच रूपों में इसका भी समन्वय किया गया है, जिसे मुनिविद्या विजय सूरि ने लिखा है। प्रसिद्ध 'भैरव-पद्मावती कल्प' नामक जैन-तन्त्र में शाक्तों की सभी बातों को अङ्गीकार किया गया है। सरस्वती-साधन जैन-तन्त्र का सिद्धि-प्रद अध्याय है। देवी-स्तोत्र में शाक्तों की सभी शक्तियों का उल्लेख है। इस शक्ति-साधना से जैन-शासन की सिद्धि बताई गई है। 'स्यादवाद मञ्जरी' के टीकाकार श्री हेमचन्द्राचार्य ने इसे स्वीकार किया है। पद्मावती-कल्प में शाक्तों की शक्ति-उपासना एवं जैन-मान्यता एक-सी ही मानी गई है। जैसे—

तोतला त्वरिता नित्या, त्रिपुरा काम-साधिनी।
देव्या नामानि पद्मायास्तथा त्रिपुरभैरवी॥
(प० क० ३)

'भक्तामार स्तोत्र' एक सिद्धि-प्रद जैन स्तोत्र है।

इससे मारण-उच्चाटन आदि षट्-कर्म की सिद्धियाँ बताई गई हैं। इन बातों को देखते हुए यह पूर्ण निश्चय हो जाता है कि 'शाक्त-धर्म' का प्रभाव इन अहिंसक धर्मों पर भी पड़ा है। जैसे पञ्च-बुद्ध की कल्पना बौद्धों ने की है, इसी प्रकार वायु-पुराण पञ्च-रात्र के आधार पर वैष्णवों में भी पञ्च-व्यूह की कल्पना की गई है, जिन्हें नारायण, कृष्ण, सङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध कहते हैं। इनकी इस कल्पना का आधार वेद नहीं है, पुराण है; जिसका अवैदिकत्व श्री शङ्कराचार्य ने वेदान्त-दर्शन के दूसरे अध्याय दूसरे पाद के अन्तिम चार सूत्रों में दिखाया है। यह भी शैवों की उक्त कल्पना के बाद की कल्पना है। इस मत में भी उपासना के तन्त्र हैं। वे सबके सब शाक्त-तन्त्रों के अनुकरण पर ही बने हैं। श्री रामानन्दीय सम्प्रदाय में मुख्योपदेश राम-मन्त्र का होता है। यह मन्त्र तन्त्र का है। शारदातिलक में इसका उपदेश दिया गया है। श्रीकृष्ण की उपासना में गोपाल-मन्त्र की प्रधानता है। इसका सविस्तार निरूपण 'क्रम-दीपिका' में किया गया है। 'क्रम-दीपिका' विशद तन्त्र-ग्रन्थ है। इसके संग्राहक श्री केशव काश्मीरी भट्ट हैं। श्री निम्बार्क-मत के साधकों में इसका प्रचार है। मूल में गौतमी तन्त्र में इसका उपदेश दिया गया है।

इसका आदि से अन्त तक शाक्त-तन्त्र ही आधार है।

चैतन्य-मत में भी तन्त्र माने जाते हैं। श्रीनित्यानन्द तथा श्री चैतन्य श्री विद्या के उपासक थे। श्री रामानुजाचार्य का लिखा हुआ 'श्री भगवती नित्याराधन-ग्रन्थः' शुद्ध तान्त्रिकी प्रणाली का ग्रन्थ है, जिससे श्री भगवान् नारायण को आराधना इस मत में होती है। श्रीवल्लभ-मत में पञ्चरात्र एवं गोपाल मन्त्र की साधना होती है। श्री गोस्वामी हित हरिवंश के मत में यद्यपि कोई संस्कृत ग्रन्थ का आधार नहीं है, तथापि पूजन-प्रकार तन्त्रों के अनुकूल ही है। हयशीर्ष, काश्यप संहिता, सात्वत तन्त्र आदि ग्रन्थ तान्त्रिक प्रणाली के पूजन के निर्देशक हैं, जिन्हें श्री रामानुजीय श्री वैष्णव मानते हैं। इस प्रकार शैव-शाक्तागम ही हिन्दू-अहिन्दू सभी सम्प्रदायों में माने जा रहे हैं। शैव-शाक्त-क्रम वैदिक है, इसलिये इसकी प्राचीनता एवं प्राथम्य में कोई सन्देह नहीं हो सकता।

आचार्य भगवत्पाद के सिद्धान्त 'अद्वैत-वाद' को भी बहुतों ने प्रच्छन्न बौद्ध मत बताया है, जिसे माध्यमिक मत के आचार्य नागार्जुन के शून्यवाद का रूपान्तर सिद्ध करने का प्रयत्न किया है। शून्यवाद का वर्णन माध्यमिक कारिका, महायान विंशक आदि

शून्यवाद के ग्रन्थों में किया है। वही श्री शङ्कर के अद्वैतवाद का आधार है। श्री पण्डित विधुशेखर भट्टाचार्य ने माण्डूक्योपनिषद् पर लिखी हुई आचार्य गौड़पाद की कारिकाओं की व्याख्या इसी भावना से की है, तथापि यह बात यथार्थ नहीं है। श्री शङ्कराचार्य का मत वही है, जिसे कश्मीर के शैव एवं शाक्तों ने माना है तथा वसुगुप्त एवं सोमानन्द आदि ने जिसका विस्तार किया है। शैव-शाक्त अद्वैतवाद में परिणामवाद पर जोर दिया गया है। श्री आचार्य शङ्कर ने विवर्तवाद मान कर केवल कार्य-कारणावस्था में सत्य है, जगद् अवस्था में मिथ्या है, इसका प्रधान रूप में प्रचार किया है। 'सौन्दर्यलहरी' में आचार्य ने परिणामवाद को ही स्वीकार किया है। यह प्रत्यभिज्ञा शैव सिद्धान्त है। पाशुपत सूत्रों की भूमिका में शैवों के भेदों का निरूपण करते हुये श्री आर० एस० शास्त्री ने काश्मीरी शैवों के विषय में कहा है—

'दि काश्मीर शैविज्म आन दि अदर हैण्ड गेव मोर प्रामीनेंस टु उमा दैन टु लार्ड शिव। वसुगुप्त एण्ड सोमानन्द वेयर दि फाउण्डर आफ़ दिस'।

अर्थात् कश्मीर के शैव श्री भगवान् शिव की अपेक्षा श्री भगवती उमा को ही प्रधानता देते हैं, इस

मत के संस्थापक वसुगुप्त एवं सोमानन्द हैं। आक्त-दर्शन का निर्माण यहीं हुआ है। 'प्रत्यभिज्ञा-हृदय', 'तत्व-सन्दोह', 'परा-प्रावेशिका', 'काम-कला-विलास' आदि ग्रन्थ इसी सम्प्रदाय में लिखे गये हैं। इस मत का विकसित रूप ही श्री शङ्कराचार्य का अद्वैतवाद है। श्री शङ्कराचार्य ने इसका कहीं खण्डन भी नहीं किया है। शङ्कर-मत में 'श्रुति' की प्रधानता है। आगम-वचनों का प्रमाण छोड़ दिया गया है। कश्मीर के शैव आगम को मुख्यता देते हैं। कश्मीर के शैवों में विवर्तवाद भी माना है। श्री सिद्धनाथ ने 'अभेद-कारिका' में कहा है—

वस्तुनो भाव-शून्यस्य त्वग्राह्यस्य निराकृतेः।
कल्पना-मात्रे वैतत् यच्छिव-व्यपदेशनम्॥
नेत्थं विभोर्विवर्तोऽस्ति परिणामश्च न क्वचित्।
अथवा द्वयमप्यस्तु तथाप्यस्य न खण्डना॥

अर्थात् अग्राह्य, आकृति-रहित भाव-शून्य वस्तु को 'शिव'-पद से व्यवहार करना भी एक कल्पना मात्र है, इस प्रकार विवर्त एवं परिणाम दोनों ही नहीं हो सकते अथवा दोनों ही हों, इसका हम खण्डन भी नहीं करते। इन दोनों के मतों का प्रतिपादन 'सम्वित्प्र-काश' में किया है—

इति निर्मल-बोधैक-रूपे देह-परिग्रहः ।
विवर्त-परिणामाभ्यां द्वाभ्यामप्युपपद्यते ॥
विवर्तेऽतथा रूपस्तथा भासित्वमच्युत ।
परिणामे स एव त्वं सुवर्णमिव कुण्डले ॥

इस प्रकार निर्मल ज्ञानैक-स्वरूप में विवर्त और परिणाम दोनों प्रकार से सृष्टि-कार्य बन सकता है। हे अच्युत ! विवर्त-रूप में तुम अतथा रूप से भासित होते हो, जैसे रज्जु में सर्प, और परिणाम में तुम वही हो, जैसे कुण्डल में स्वर्ण। ये दोनों बातें 'माण्डूक्य-कारिका' में विस्तार एवं स्पष्ट रूप में गौड़पाद ने स्वीकार की हैं। नागार्जुन ने अपने शून्य का लक्षण भी ऐसा ही किया है। शैव-दर्शन प्राचीन होने से श्रुति-आगम-सम्मत है, नागार्जुन ने केवल तर्क से ही इसे सिद्ध किया है, तथापि यह शून्य-वाद शैवों का ही अनुकरण है। श्रीवातुलनाथ-सूत्रों में भी शिव को शून्याकार में बतलाया गया है। शून्य का अर्थ श्री अमृतानन्दनाथ योगी ने 'योगिनी-हृदय' (१—१०) की टीका में ऐसा किया है—

शून्याकाराद् विसर्गान्ताद् विन्दोः प्रस्पन्द सम्विदः

इस श्लोक की व्याख्या में कहा है—

शून्यत्वं पुनरभ-निरस्त-निखिल-प्रपञ्चत्वात् अतएव परम-शिवः ।

समस्त प्रपञ्च से रहित परम शिव ही शून्याकार-वाले हैं—

प्रपञ्चोपशमं शिवं ।

इस माण्डूक्योपनिषद् में भी शिव का स्वरूप उक्त प्रकार का ही बताया है। यह उपनिषद् भी 'वह है' सिद्धान्त का ही प्रतिपादन करती है। इसमें स्पष्टतः कई बार 'शिव'-पद का नाम लिया गया है। यह 'शिव'-तत्व भावाभाव-विलक्षण है; यही वाङ्-मनोऽगोचर शाङ्कर अद्वैत है। आचार्य भगवत्पाद के मत में शिव-विष्णु का भेद न होने से उनका मत एक प्रकार का समन्वयी मत है, तथापि श्रुति की प्रधानता को अङ्गीकार करते हुये एक स्वतन्त्र शैवाद्वैत ही उनका मत है। शाङ्कर मत के अनुयायी संन्यासी, गृहस्थ, ब्रह्मचारी आदि मुख्य रूप से शिव-शक्ति की ही उपासना करते हैं, तथा उपासना के शैव-शाक्त चिह्नों को धारण करते हैं। उन्हें नागार्जुन-मत का अनुकरणकर्ता कहना किसी प्रकार से ठीक नहीं, प्रत्युत नागार्जुन ही इसके अनुकरण करनेवाले हैं। शैवों के चौथे भेद का निरूपण करते हुये श्री आर० एस० शास्त्री लिखते हैं—

'दि फोर्थ सेक्ट हैड ओन्ली ए वेरी फ्यू लीडर्स,

फ़ार दे वाण्टेड टु अटेन सिद्धीज़ फ़ार देमसेल्व्ज़। श्रीगोविन्द भगवत्पाद वाज़ वन हू फ़ालोड दिस सेक्शन।'

अर्थात् चौथे प्रकार के शैवों में बहुत थोड़े आचार्य हुये हैं। उस विभाग में केवल सिद्ध लोग ही हुये हैं, इनमें गोविन्द भगवत्पाद मुख्य हैं। यही गोविन्द भगवत्पाद श्री शङ्कराचार्य के गुरु हैं। पहले के प्रमाणों से यह सिद्ध है कि शैव-शक्ति मतों के सिद्धान्तों के अनुकरण पर बौद्धों के तान्त्रिक मत बने हैं। इस प्रकार 'शैव-तत्व-ज्ञान' के अनुकरण पर ही नागार्जुन का शून्य-मत है।

शाक्त-दर्शन एवं उनकी पूजा-पद्धति किसी के अनुकरण पर नहीं बनी है, प्रत्युत इन्हीं का अनुकरण सबने किया है, यह एक सार्वभौम सिद्धान्त है। इसके इस समय भी सबसे अधिक प्रचार-चिह्न संसार में मिलते हैं। श्री पाणिनि के सूत्रों में एक भी सूत्र बुद्ध-मत पर नहीं है, क्योंकि बुद्ध पाणिनि के पश्चात् हुये हैं—

'शिवादिभ्यो अण् (अ० ४-१-११२)

इस सूत्र के द्वारा पाणिनि ने यह प्रमाणित किया है कि 'शिव'-शब्द या शैव धर्म पहले का है।

नागार्जुन ने अपनी माध्यमिक-कारिका में भी 'शिव' शब्द का प्रयोग किया है—

यः प्रतीत्य समुत्पादं प्रपञ्चोपशमं शिवम् ।
देशयामास सम्बुद्धस्तं वन्दे द्विपदां वरम् ॥

'प्रपञ्चोपशमं शिवं' पद माण्डूक्य-उपनिषद् से लिया गया है। ऐसी अवस्था में शाङ्कर अद्वैत किस प्रकार बुद्ध-मत के अनुकरण पर है, इसे विज्ञ पाठक स्वयं समझ सकते हैं। यह अवश्य है कि शून्यवाद एवं शाङ्कर अद्वैतवाद में बहुत-सी युक्तियाँ एक-सी प्रयुक्त हुई हैं। अतः बहुत अंशों में साम्य है, तथापि शाङ्कर सिद्धान्त श्रौत है, इसलिये नागार्जुन का अनुकरण नहीं हो सकता, प्रत्युत नागार्जुन का मत ही शैव सिद्धान्त के अनुकरण पर है।

उपर्युक्त बहिरङ्ग बातें लिखने का यही प्रयोजन है कि शाक्त-साधना पर बहुत-सी भ्रान्त धारणायें लोगों में प्रचलित हैं, तथा अविचारक लोग इस समय भी उनका प्रचार कर रहे हैं। उनका निराकरण होना आवश्यक है, नहीं तो साधना-तत्व के निरूपण के प्रसङ्ग पर इन बातों की आवश्यकता ही क्या है! अतः, संक्षेप में श्री भगवती की साधन-विधि को लिखकर अब इस विस्तार से उपरत होना ही ठीक है।

श्री भगवती छिन्नमस्ता जी की साधना इस प्रकार करनी चाहिये—

सर्व-प्रथम प्रातःकाल शैय्या से उठकर सहस्रार में स्थित श्रीगुरु का ध्यान, मानसिक पूजन एवं गुरु-पादुका मन्त्र का वाग्भव-बीज जपपूर्वक १०८ बार जप करना चाहिये। अनन्तर षोडशी मूलमन्त्र अथवा कूर्च-बीज का १०८ बार जप ध्यानपूर्वक करे, तदनन्तर स्नान-सन्ध्या आदि आवश्यक कृत्य से निवृत्त होकर पद्धति के अनुसार पूजन करे।

इनके दो प्रकार के पूजन-यन्त्र हैं—

१ गृहस्थों के लिये और २ यतियों के लिये।

त्रिकोण, इसके बाद तीन मण्डल, इसके ऊपर योनि-चक्र, तीन द्वारों से युक्त, बाहर अष्टदल पद्म, भूपुर की तीन रेखायें, मध्य में 'हूं' बीज, तीनों कोणों में 'हूं फट्', इन वर्णों को लिखना चाहिये। मध्य में श्री छिन्नमस्ता जी का दीप-ज्योति के सदृश ध्यान करना चाहिये, यह यतियों का ध्यान है।

गृहस्थों को स्व-शरीर के नाभि-मण्डल में शुभ्र कमल पर निर्गुण स्वच्छ चन्द्रमा की कान्ति-सदृश कलातीत, गुणातीत ध्यान करना चाहिये। इसके बाद शङ्ख-स्थापन आदि क्रियायें तारा-विद्या के तुल्य

हो करे। षोढा-न्यास, वज्र-न्यास इस साधना में अत्यन्त आवश्यक हैं। एकाक्षर, त्र्यक्षर, चतुरक्षर, पञ्चाक्षर, षडक्षर, त्रयोदश, चतुर्दश, पञ्चदश, षोडश तथा सप्तदश कलातीत मन्त्रों का अभ्यास क्रम से करना चाहिये। अष्टादशाक्षरी, एकोनविंशत्यक्षरी विद्या भी पूर्णता देनेवाली है, तथापि इन्हें कोई-कोई ही जपते हैं। इनके पूजन में पशु-वलिदान नित्य ही आवश्यक है। यति अनुकल्प से कर सकते हैं। इनका रात्रि-पूजन वामाचार का है, यही प्रधानतः सिद्धि-प्रद है। श्री तारा के मन्त्र एवं दक्षिणा-काली के मन्त्र भी पूरक रूप में जपे जाते हैं। इस प्रकार सतत श्रद्धा एवं भक्तिपूर्वक अनुष्ठान करने से श्री भगवती सभी समीहितों को पूर्ण करती हैं।

॥ ॐ शम् ॥

श्री छिन्नमस्ता नित्यार्चन

पहले वैदिक कर्म कर ले, फिर तान्त्रिक विधि करे। यह नियम सभी स्थलों पर माननीय है।

प्रातः-कृत्य

१ गुरु-स्मरण

ब्राह्म-मुहूर्त में उठकर दोनों हाथों और पैरों को धोकर अपने शिर में स्थित सहस्र-दल-कमल में विराजमान श्री गुरुदेव के स्वरूप का निम्न प्रकार ध्यान करे—

श्वेत-वर्णं द्विभुजं वराभय-करं श्वेत-माल्यानु-लेपनं,
स्व-प्रकाश-रूपं स्व-वाम-स्थितया रक्त-शक्त्या सहितं गुरुं।

तब मानस पञ्चोपचारों से श्रीगुरु का पूजन कर निम्न मन्त्रों से उन्हें नमस्कार करे—

ॐ अखण्ड-मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥
ॐ अज्ञान-तिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जन-शलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

२ पर-देवता-स्मरण

इसके बाद अपने शरीर के मूलाधार में पर-देवता का ध्यान निम्न प्रकार करे—

छिन्नमस्तां महाविद्यामक्षरात्म-स्वरूपिणीम् ।
विद्युदग्नि-समुद्भूतां प्रसुप्त-भुजगी-तनुम् ।।
कुण्डली-रूप-संयुक्तां नाना-तत्त्व-समन्विताम् ।।
त्रिवली-वलयोपेतां नाना-स्थान-कृतां शुभाम् ।।

इस प्रकार ध्यान कर १००८ या ३०८ या १०८ बार मन्त्र का जप करे ।

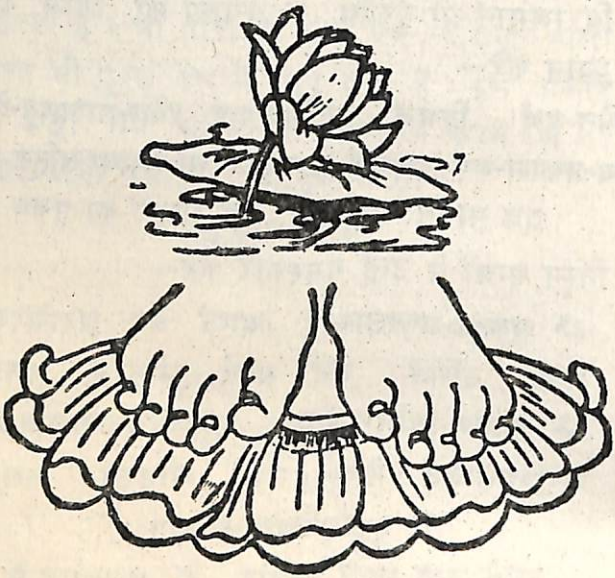

स्नान और सन्ध्योपासन

प्रातः-कृत्य कर साधक नित्य-कृत्यों से निपट कर स्नानादि करे।

१ स्नान

पहले स्नान करे। लाल चन्दन और दूर्वा से युक्त ताम्र-पात्र को लेकर यह सङ्कल्प करे—**ॐ तत्सत् .....श्रीछिन्नमस्ता-देव्याः प्रीतये स्नानमहं करिष्ये।**

इस प्रकार सङ्कल्प छोड़कर प्राणायाम और षडङ्ग-न्यास करे। फिर स्नानीय जल में—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि, जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

इस मन्त्र से अंकुश-मुद्रा द्वारा सूर्य-मण्डल से तीर्थों का आवाहन कर '**वं**' से धेनु-मुद्रा द्वारा उसका अमृतीकरण, '**हूं**' से उसका अवगुण्ठन और '**फट्**' से उसका संरक्षण करे। फिर मूल-मन्त्र से ग्यारह बार उसे अभिमन्त्रित कर सूर्य को बारह अञ्जलियाँ देकर इष्ट-देवता के चरणों से उस जल को निकला हुआ मानकर उसमें स्नान करे। तब पुनः देवता का ध्यान कर मूल-मन्त्र का यथा-शक्ति जप करे और तीन बार

मूल-मन्त्र से अभिमन्त्रित जल को कलश-मुद्रा के द्वारा अपने शिर पर छोड़े ।

२ सन्ध्योपासन

अब सन्ध्योपासन करे । पहले तीन बार निम्न मन्त्रों से आचमन करे—**ॐ आत्म-तत्वाय स्वाहा, ॐ विद्या-तत्त्वाय स्वाहा, ॐ शिव-तत्त्वाय स्वाहा ।**

तदनन्तर जल में '**ॐ गङ्गे च०**' से पूर्ववत् तीर्थों का आवाहन कर, मूल-मन्त्र से कुशाग्र-भाग द्वारा तीन बार भूमि पर जल छिड़ककर, उस जल से आठ बार अपने मूर्धा का अभिसिञ्चन करे । तब षडङ्ग-न्यास कर बाएँ हाथ में जल ले और उसे दाएँ हाथ से ढँक-कर '**हं यं रं लं वं**' से तीन बार उसे अभिमन्त्रित करे । फिर मूल-मन्त्र का उच्चारण करते हुये टपकते हुये जल-विन्दुओं से तत्त्व-मुद्रा द्वारा अपने सिर पर सात बार अभ्युक्षण करे । शेष जल को दाहिने हाथ में लेकर तेजोरूप में ध्यान करे । फिर उसे इडा से आकृष्ट कर देह के भीतर स्थित कृष्ण-वर्ण के पाप को उससे धोकर उस जल को पाप-रूप ध्यान कर पिङ्गला से निकाल कर अपने सम्मुख कल्पित वज्र-शिला पर '**फट्**' से उस पाप-रूप जल को पटक दे ।

इसके बाद हाथ-पैर धोकर आचमन करे और

'ॐ घृणिः सूर्य आदित्याय इदमर्घ्यं स्वाहा' से सूर्य को अर्घ्य देकर सूर्य-मण्डल में देवी का ध्यान कर उन्हें नमस्कार करे। यथा—ॐ सूर्य-मण्डलस्थायै श्रीछिन्नमस्तायै नमः।

फिर छिन्नमस्ता-गायत्री से तीन बार जल छोड़कर तर्पण करे। इसके बाद 'ॐ देवान् तर्पयामि नमः, ॐ ऋषीन् त०, ॐ पितॄन् त०, ॐ गुरुं त०, ॐ परम-गुरुं त०, ॐ परापर-गुरुं त०, ॐ परमेष्ठि-गुरुं त०, मूलं छिन्नमस्तां देवीं त०' से इन सबका तीन-तीन बार तर्पण करे। तब 'ॐ छिन्नमस्तावरण-देवतास्तर्पयामि नमः' से आवरण देवताओं का तर्पण करे।

इसके बाद शुद्ध सूखे वस्त्र पहनकर 'ॐ ह्रां ह्रूं सः मार्तण्ड-भैरवाय प्रकाश-शक्ति-सहिताय इदमर्घ्यं स्वाहा' से सूर्य को पुनः अर्घ्य देकर पहले सूर्य-मण्डल में गायत्री का ध्यान करे। यथा—

श्याम-वर्णां चतुर्भुजां, शङ्ख-चक्र-लसत्कराम्।
गदा-पद्म-धरां देवीं, सूर्यासन-कृताश्रयाम्॥

ध्यान कर निम्नलिखित छिन्नमस्ता-गायत्री का १०८ बार जप करे—ॐ वैरोचन्यै विद्महे छिन्नमस्तायै धीमहि तन्नो देवी प्रचोदयात्।

फिर सूर्य-मण्डल-स्थित देवी को मानसिक प्रणाम कर वरुणदेव को नमस्कार कर गृह को प्रस्थान करे।

नित्यार्चन

१ द्वार-पूजा

भले प्रकार शुद्ध होकर तथा शुद्ध वस्त्र पहनकर पूजा-गृह से द्वार पर जाकर सामान्यार्घ्य की स्थापना करे। यथा **'मूलं फट्'** से सामान्यार्घ्य-पात्र का संशोधन कर उसे वृत्त-युक्त त्रिकोण पर स्थापित करे। फिर **'मूलं वं'** से शुद्ध-जल से भर कर **'ॐ गङ्गे च०'** इत्यादि से पूर्ववत् सूर्य-मण्डल से अंकुश-मुद्रा द्वारा तीर्थों का उस जल में आवाहन करे। तब **'ॐ'** से उस जल में पुष्पाक्षत और चन्दन छोड़कर धेनु-मुद्रा से उसका अमृतीकरण कर **'ॐ'** का उसके ऊपर दस बार जप करे। फिर उस जल से **'फट्'** से पूजा-गृह के द्वार का अभिषिञ्चन कर द्वार-पूजा आरम्भ करे। द्वार के ऊर्ध्व-भाग के मध्य में **'ॐ गं गणपतये नमः'** से, दाहिनी ओर **'श्रीं लक्ष्म्यै नमः'** से, बाईं ओर **'ऐं सरस्वत्यै नमः'** से पूजा कर द्वार की दाहिनी शाखा में **'गं गणपतये नमः'** से, बाईं शाखा में **'क्षं क्षेत्रपालाय नमः'** से तथा क्षेत्रपाल के दोनों बगल में **'ॐ धात्रे नमः,** और **'ॐ विधात्रे नमः'** से पूजाकर द्वार की देहली में **'ॐ शङ्ख-निधये नमः, ॐ पद्म-निधये नमः'** से पूजन करे।

इस प्रकार द्वार-पूजा कर बाएँ अङ्ग का सङ्कोचन करते हुये बाएँ पैर को आगे बढ़ाकर पूजा-मण्डप में प्रवेश करे। वहाँ **'अस्त्राय फट्'** का उच्चारण कर क्षेत्र-पालों को मानसिक प्रणाम कर ब्रह्मा, अनन्त, आधार-शक्ति, मणि-वेदी, स्वर्ण-सिंहासन, अष्ट-शक्ति, आनन्द-कन्द, संविन्नाल, प्रकृति-पात्र, विकार-मय केशर, सर्व-तत्वा-त्मक-पत्र, कमल, सत्व, रज, तम, सूर्य-बिम्ब, चन्द्र-बिम्ब, पञ्चाशद्बीज-मय-कर्णिका, आत्मा, परमात्मा और अन्तरात्मा को प्रणाम करे। फिर जल द्वारा 'हुं' से अपने चारों ओर घेरा करके अपने को वेष्ठित करे। तब **'अस्त्राय फट्'** से तीन बार ताली बजाकर सभी विघ्नों को दूर कर मण्डप के निर्ऋति कोण में **'ॐ ब्रह्मणे नमः, ॐ वास्तु-पुरुषाय नमः'** से पूजन कर आसन स्थापित करे। फिर आसन पर **'आधार-शक्तये नमः, मूल-प्रकृत्यै नमः, कूर्माय नमः, अनन्ताय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः'** से पूजा कर विनियोग पढ़े। यथा—**आसन-मन्त्रस्य मेरु-पृष्ठ ऋषिः, सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसनोपवेशने विनियोगः।**

तदनन्तर **'शिरसि मेरुपृष्ठ-ऋषये नमः, मुखे सुतलं छन्दसे नमः, हृदि कूर्म-देवतायै नमः'** से न्यास करे।

फिर हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका, देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां नित्यं, पवित्रं कुरु चासनम् ।।

इस प्रकार आसन-पूजन कर उस पर बैठे । तब अपने बाएँ **'गुरवे नमः'**, दाएँ **'गणेशाय नमः'**, पीछे **'क्षेत्रपालाय नमः'** और सामने **'रति-कामोपविष्टा-छिन्नमस्तायै नमः'** से प्रणाम कर **'हुं फट्'** से गन्ध-पुष्प को ले उसे मसलते हुये अपने दोनों हाथों का संशोधन कर उस पुष्प को नाराच-मुद्रा से ईशान-दिशा में फेंक दे । फिर ऊपर की ओर तीन बार ताली बजाकर छोटिका मुद्रा से अपने शिर के चारों ओर दस बार चुटकी बजाता हुआ दिग्बन्धन करे । तब **'रं'** वीज का उच्चारण कर अपने चारों ओर जल की धार गिरा-कर अग्नि-प्राकार की कल्पना करे ।

अब भूत-शुद्धि करे । यथा—

३ भूत-शुद्धि

अपनी गोद में अपने दोनों हाथों को ऊर्ध्व-मुख रखकर स्व-हृदय-स्थित प्रदीप-कलिकाकार 'हंस'-स्व-रूप अपनी जीवात्मा को मूलाधार-स्थित कुण्डलिनी के साथ सुषुम्ना-मार्ग से मूलाधार-स्वाधिष्ठान-मणि-पूरक-अनाहत-विशुद्ध-आज्ञा इन षट्-चक्रों का भेदन करते हुये शिर में स्थित अधोमुख सहस्र-दल कमल

की कर्णिका में विद्यमान परमात्मा से संयुक्त कर यह भावना करे कि वहीं पर पृथिवी, अप्, तेज, वायु, आकाश; रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द; नासिका, जिह्वा, चक्षु, त्वक्, श्रोत्र; वाक्, पाणि, पाद, पायु, उपस्थ; प्रकृति, मन, बुद्धि और अहङ्कार—ये चौबीसों तत्त्व लीन हो गये। फिर अपने बाएँ नासा-पुट में धूम्र-वर्ण वायु-बीज 'यं' की कल्पना कर उसका सोलह बार जप करते हुये वायु से स्व-देह को पूर्ण कर दोनों नासा-पुटों को बन्द कर 'यं' का चौसठ बार जप करते हुये कुम्भक कर अपनी बाईं कोख में पाप-पुरुष का ध्यान करे। यथा—

वाम-कुक्षि-स्थितं पाप-पुरुषं तु कृष्ण-वर्णं।
ब्रह्म-हत्या-शिरः-स्कन्धं, स्वर्ण-स्तेय-भुज-द्वयम् ॥
सुरा-पान-हृदा-युक्तं, गुरु-तल्प-कटि-द्वयम्।
तत्संसर्ग-पद-द्वन्द्वमङ्ग-प्रत्यङ्ग-पातकम् ॥
उप-पातक-रोमाणं, रक्त-श्मश्रु-विलोचनम्।
खड्ग-चर्म-धरं क्रुद्धं, पाप-रूप-भयङ्करम् ॥

इस प्रकार पाप-पुरुष-सहित अपनी देह का शोषण कर बत्तीस बार 'यं' का जप करते हुये दाएँ नासा-पुट से वायु को निकाल दे। तब दाएँ नासा-पुट में रक्त-वर्ण के वह्नि-बीज 'रं' का चिन्तन कर उसका सोलह

बार जप करते हुये वायु भरे और दोनों नासा-पुटों को बन्द कर 'रं' का चौंसठ बार जप करते हुये 'कुम्भक' कर बाईं कोख में स्थित पाप-पुरुष के सहित अपनी देह को दग्ध कर 'रं' का बत्तीस बार जप करते हुये बाईं नासा से दग्ध पाप-पुरुष और देह की भस्म के सहित वायु को निकाल दे। इसके बाद शुक्ल-वर्ण के चन्द्र-वीज 'वं' का बाएँ नासा-पुट में ध्यान कर उसे सोलह बार जपता हुआ पूरक-क्रिया से ललाट में चन्द्रमा को ले जाकर कुम्भक-क्रिया में वरुण-वीज 'वं' का चौंसठ बार जप करते हुये ललाट के चन्द्रमा से गिरते हुये मातृका-वर्णात्मक अमृत से अपनी सारी देह की रचना कर पृथिवी-वीज 'लं' का बत्तीस बार जप कर अपनी उक्त देह को दृढ़ समझता हुआ दाएँ नासा-पुट से वायु का रेचन करे।

४ प्राण-प्रतिष्ठा

इस प्रकार देह का संशोधन कर अपने हृदय पर हाथ रखकर निम्न मन्त्र से प्राण-प्रतिष्ठा करे—**ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं सोहं मम प्राणा इह प्राणा। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं सोहं मम जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं सोहं मम सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं**

वं शं षं सं हौं सोहं मम वाङ्-मनस्त्वक्-चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

इस प्रकार प्राण-प्रतिष्ठा करके 'सोहं' मन्त्र से सुषुम्णा-मार्ग से अपने जीव को, तत्त्वों को और कुण्डलिनी को अपने-अपने स्थान में स्थापित करे ।

५ बहिर्मातृका-न्यास

अब बहिर्मातृका-न्यास करे । पहले विनियोग पढ़े । यथा—अस्य श्रीबहिर्मातृका-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्रीमातृका-सरस्वती देवता, हलो बीजानि, स्वराः शक्तयोऽव्यक्तं कीलकं, देह-शुद्धि-सिद्ध्यर्थे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः शिरसि, ॐ गायत्री छन्दसे नमः मुखे, ॐ मातृका-सरस्वती-देवतायै नमः हृदि, ॐ हल्भ्यो बीजेभ्यो नमः गुह्ये, ॐ स्वरेभ्यो शक्तिभ्यो नमः पादयोः । ॐ अव्यक्त-कीलकाय नमः सर्वाङ्गे ।

कर-न्यास—ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः, ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां स्वाहा, ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां वषट्, ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां हुं, ॐ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्, ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं ळं क्षं अः करतल-करपृष्ठाभ्यां फट् ।

इसी प्रकार हृदयादि-न्यास करके पहले अन्त-मर्तृका-न्यास करे। यथा—

कण्ठे धूम्र-वर्णे षोडश-दले विशुद्धे—ॐ अं नमः। ॐ आं नमः। ॐ इं नमः। ॐ ईं नमः। ॐ उं नमः। ॐ ऊं नमः। ॐ ऋं नमः। ॐ ॠं नमः। ॐ ऌं नमः। ॐ ॡं नमः। ॐ एं नमः। ॐ ऐं नमः। ॐ ओं नमः। ॐ औं नमः। ॐ अं नमः। ॐ अः नमः।

हृदये रक्त-वर्णे द्वादश-दले अनाहते—ॐ कं नमः। ॐ खं नमः। ॐ गं नमः। ॐ घं नमः। ॐ ङं नमः। ॐ चं नमः। ॐ छं नमः। ॐ जं नमः। ॐ झं नमः। ॐ ञं नमः। ॐ टं नमः। ॐ ठं नमः।

नाभौ मेघ-वर्णे दश-दले मणिपूरे—ॐ डं नमः। ॐ ढं नमः। ॐ णं नमः। ॐ तं नमः। ॐ थं नमः। ॐ दं नमः। ॐ धं नमः। ॐ नं नमः। ॐ पं नमः। ॐ फं नमः।

लिङ्ग-मूले विद्युद्वर्णे षट्-दले स्वाधिष्ठाने—ॐ बं नमः। ॐ भं नमः। ॐ मं नमः। ॐ यं नमः। ॐ रं नमः। ॐ लं नमः।

सुवर्ण-वर्णे चतुर्दले मूलाधारे—ॐ वं नमः। ॐ शं नमः। ॐ षं नमः। ॐ सं नमः।

भ्रू-मध्ये श्वेत-वर्णे द्वि-दले आज्ञा-चक्रे-ॐहं नमः।

ॐ क्षं नमः ।

अब शरीर के बाहरी अङ्गों में मातृका-वर्णों का न्यास करे । पहले बाह्य-मातृका-सरस्वती का ध्यान करे । यथा—

पञ्चाशल्लिपिभिर्विभक्ति-मुख-दोःपन्मध्य-वक्ष-स्थलाम् ।
भास्वन्मौलि-निबद्ध-चन्द्र-शकलामापीन-तुङ्ग-स्तनीम् ॥
मुद्रामक्ष-गुणं सुधाढ्य-कलशं विद्यां च हस्ताम्बुजै-
र्विभ्राणां विशद-प्रभां त्रि-नयनां वाग्देवतामाश्रये ॥

इस प्रकार ध्यान कर न्यास करे—

ॐ अं नमः शिरसि । ॐ आं नमः मुख-वृत्ते । ॐ इं नमः दक्ष-नेत्रे । ॐ ईं नमः वाम-नेत्रे । ॐ उं नमः दक्ष-कर्णे । ॐ ऊं नमः वाम-कर्णे । ॐ ऋं नमः दक्ष-नासायाम् । ॐ ॠं नमः वाम-नासायाम् । ॐ ऌं नमः दक्ष-गण्डे । ॐ ॡं नमः वाम-गण्डे । ॐ एं नमः ऊर्ध्व-ओष्ठे । ॐ ऐं नमः अधो ओष्ठे । ॐ ओं नमः ऊर्ध्व-दन्त-पंक्तौ । ॐ औं नमः अधो दन्त-पंक्तौ । ॐ अं नमः ब्रह्म-रन्ध्रे । ॐ अः नमः मुखे ।

ॐ कं नमः दक्ष बाहु-मूले । ॐ खं नमः दक्ष-कूर्परे । ॐ गं नमः दक्ष-मणिबन्धे । ॐ घं नमः दक्ष-अंगुलि-मूले । ॐ ङं नमः दक्ष-कराग्रे । ॐ चं नमः वाम-बाहु-मूले । ॐ छं नमः वाम-कूर्परे । ॐ जं नमः

वाम-मणिबन्धे । ॐ ज्ञं नमः वाम-अंगुलि-मूले । ॐ ञं नमः वाम-कराग्रे । ॐ टं नमः दक्षोरु-मूले । ॐ ठं नमः दक्ष-जानुनि । ॐ डं नमः गुल्फे । ॐ ढं नमः दक्ष-पाद-तले । ॐ णं नमः दक्ष-पादाग्रे । ॐ तं नमः वामोरु-मूले । ॐ थं नमः वाम-जानुनि । ॐ दं नमः वाम-गुल्फे । ॐ धं नमः वाम-पाद-तले । ॐ नं नमः वाम-पादाग्रे । ॐ पं नमः दक्ष-पार्श्वे । ॐ फं नमः वाम-पार्श्वे । ॐ बं नमः पृष्ठे । ॐ भं नमः नाभौ । ॐ मं नमः जठरे । ॐ यं त्वगात्मने नमः हृदि । ॐ रं नमः दक्षांशे । ॐ लं नमः ककुदि । ॐ वं नमः वामांशे । ॐ शं नमः हृदादि दक्ष-करांगुल्यन्तम् । ॐ षं नमः हृदादि-वाम-करांगुल्यन्तम् । ॐ सं नमः नाभ्यादि-वाम-पादान्तम् । ॐ ळं नमः हृदादि-कुक्षौ । ॐ क्षं नमः हृदादि-मुखे ।

६ मूलमन्त्र-प्राणायाम

मूलमन्त्र का एक बार जप करता हुआ पूरक, चार बार जप करता हुआ कुम्भक और दो बार जप करता हुआ रेचन करें। इस प्रकार तीन बार उलट-पुलट कर तीनबार प्राणायाम करे।

७ मन्त्राचमन

'श्रीं ह्रीं हूं' से तीन बार आचमन कर 'ऐं' से

ओष्ठ और अधर का स्पर्श करे। 'ह्रीं ह्रीं' से भी दो बार स्पर्श करे। 'हूं' से दोनों हाथों को धोकर निम्न प्रकार न्यास करे—

८ वीज-न्यास

'श्रीं मुखे, ह्रीं दक्षनासापुटे, हूं वामनासापुटे, ऐं दक्षनेत्रे, क्लीं वामनेत्रे, श्रीं ह्रीं क्लीं दक्षकर्णे, ऐं वामकर्णे, इं नाभौ, क्रों हृदये, क्रों शिरसि।

इस प्रकार न्यास करने के बाद पूजा को आरम्भ करे।

९ इष्ट-पूजा का प्रारम्भ

अपने बाएँ जल-पात्र, दाएँ पुष्पादिक पूजा-सामग्री और सामने दीपादिक स्थापित करे। फिर अपनी बाईं ओर **'गुं गुरुभ्यो नमः'** से गुरुओं को, दाहिनी ओर **'गं गणपतये नमः'** से गणेश को और सामने **'श्रीछिन्नमस्तायै नमः'** से इष्ट-देवता को नमस्कार करे।

विनियोग—**ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्ता-मन्त्रस्य क्रोध-भैरव ऋषिः, सम्राट् छन्दः, श्रीछिन्नमस्ता देवता, हूं हूं वीजं *, स्वाहा शक्तिः, इष्ट-सिद्ध्यै विनियोगः।**

ऋष्यादि-न्यास—**शिरसि क्रोध-भैरवाय ऋषये नमः। मुखे सम्राट्-छन्दसे नमः। हृदि श्रीछिन्नमस्तायै**

---

* मन्त्र-महोदधि में वीज 'ह्रीं ह्रीं' लिखा है।

देवतायै नमः। गुह्ये हूं हूं वीजाय नमः। पादयोः स्वाहा शक्तये नमः। इष्ट-सिद्धि-विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास—ॐ श्रांखड्गाय स्वाहा कनिष्ठिकाभ्यां। ॐ ईं सुखड्गाय स्वाहा अनामिकाभ्यां। ॐ ऊं वज्राय स्वाहा मध्यमाभ्यां। ॐ ऐं पाशाय स्वाहा तर्जनीभ्यां। ॐ ओं अंकुशाय स्वाहा अंगुष्ठाभ्यां। ॐ अः सुरक्षा रक्ष असुरक्षाय स्वाहा कर-तल-करपृष्ठाभ्यां।※

षडङ्ग-न्यास—ॐ आं खड्गाय हृदयाय नमः स्वाहा। ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा स्वाहा। ॐ ऊं वज्राय शिखायै वषट् स्वाहा। ॐ ऐं पाशाय कवचाय हुं स्वाहा। ॐ औं अंकुशाय नेत्र-त्रयाय वौषट् स्वाहा। ॐ अः सुरक्षा रक्ष असुरक्षाय ❀ अस्त्राय फट् स्वाहा।

षोढा-न्यास—(१) श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं हौं।

(२) ओं क्रीं स्त्रीं क्रों।

※ मन्त्र-महोदधि में कर-न्यास अंगुष्ठ से प्रारम्भ किया गया है।

❀ मन्त्र-महोदधि में…'सुरक्ष रक्ष ह्रीं ह्रीं अस्त्राय फट्…' दिया है।

(३) ईं हुं फट् ।

(४) श्रीं क्लीं हूं ऐं वज्र-वैरोचनीये हुं हुं फट् स्वाहा ।

(५) श्रीं ह्रीं हूं ऐं वज्र-वैरोचनीये श्रीं ह्रीं ऐं फट् स्वाहा ।

(६) श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं हौं ओं श्रीं क्लीं हुं ऐं वज्र-वैरोचनीये हुं हुं फट् स्वाहा ।

उपर्युक्त छः मन्त्रों में से प्रत्येक को मातृका से अन्तरित कर मातृका-वत् सभी मातृका-स्थानों में न्यास करे। यथा—'श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं हौं ॐ अं नमः शिरसि ।' इसी प्रकार छहों मन्त्रों से न्यास करे ।

व्यापक-न्यास—मूलमन्त्र से मस्तक से पैर तक और पैर से मस्तक तक न्यास कर पुनः प्रणव से तीन बार व्यापक न्यास करे । अब अन्तर्यजन करे ।

पहले इष्ट-देवता का ध्यान करे । यथा—

अन्तर-स्वशरीरस्य, नाभि-नीरज-संस्थिताम् ।
निर्लेपां त्रिगुणां सौम्यां, बाल-चन्द्र-सम-प्रभाम् ॥
समाधि-मात्र-गम्यां च, गुण-त्रय-समन्विताम् ।
कलातीतां गुणातीतां, भुक्ति-मुक्ति-प्रदां स्मरेत् ॥

इस प्रकार ध्यान कर मानसोपचारों से पूजन करे। यथा—

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर अधोमुख-कनिष्ठांगुष्ठ से गन्ध-मुद्रा दिखावे।

हं आकाशात्मकं पुष्पं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर अधोमुख-तर्जनी-अंगुष्ठ से पुष्प-मुद्रा दिखावे।

यं वाय्वात्मकं धूपं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख तर्जन्यंगुष्ठ से धूप-मुद्रा दिखावे।

रं वन्ह्यात्मकं दीपं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर ऊर्ध्व-मुख मध्यमांगुष्ठ से धूप-मुद्रा दिखावे।

वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर अनामांगुष्ठ से नैवेद्य मुद्रा दिखावे।

शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्रीछिन्नमस्ता-पादुकाभ्यां नमः अनुकल्पयामि—यह पढ़कर सर्वांगुलियों से ताम्बूल-मुद्रा दिखावे।

अब सामान्यार्घ्य को स्थापना करे। यथा—

साधक आसन से कुछ हटकर अपनी दाहिनी ओर भूमि पर रक्त-चन्दन से त्रिकोण-वृत्त का एक मण्डल बनावे। फिर उसमें वह **'ॐ ह्रीं आधार-शक्त्यै नमः'** से गन्ध, अक्षत, पुष्प चढ़ाकर आधार-शक्ति का पूजन करे। फिर वह आधार लेकर **'फट्'** मन्त्र से धोकर मण्डल पर स्थापित करे और उसकी **'ॐ सामान्यार्घ्य-पात्राधाराय नमः'** से गन्धाक्षत-पुष्प द्वारा पूजा करे। फिर एक पात्र लेकर **'फट्'** मन्त्र से धोकर उसे आधार पर स्थापित करे। फिर गन्धाक्षत-पुष्प छोड़कर **'ॐ सामान्यार्घ्य-पात्राय नमः'** से उसका पूजन करे। फिर उसमें **'ह्रीं'** मन्त्र पढ़ता हुआ जल भरे। फिर अंकुश मुद्रा द्वारा उस जल में निम्न मन्त्र पढ़ता हुआ सूर्य-मण्डल से तीर्थों का आवाहन करे—

ॐ गङ्गे च यमुने चैव, गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि, जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥

फिर **'ॐ गन्धाक्षत-पुष्पं समर्पयामि'** से उसमें गन्ध, अक्षत और पुष्प छोड़े। फिर उस जल में धेनु-मुद्रा दिखाकर उसे अमृत-मय करे। फिर उस पर **'ॐ'** का दस बार जप करे।

इसके बाद शङ्ख-स्थापन करे। अपनी बाईं ओर सामान्यार्घ्य जल से चतुरस्र, उसके मध्य में त्रिकोण बनाकर उस पर त्रिपद को रखे। फिर **'फट्'** से शङ्ख को धोकर उसे त्रिपद पर स्थापित करे। **'ॐ मदंश-कलात्मने वह्नि-मण्डलाय नमः'** से शङ्ख की पूजा करे। **'नमः'** से उसमें गन्ध-पुष्पाक्षत-दूर्वा छोड़कर **'क्षं ळं हं सं षं शं वं लं रं यं मं भं बं फं पं नं धं दं थं तं णं ढं डं ठं टं ञं झं जं छं चं ङं घं गं खं कं अः अं औं ओं ऐं एं ऌं लृं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं मूलं'** का उच्चारण करता हुआ उसे शुद्ध जल से भर दे। फिर **'ॐ सोम-मण्डलाय षोडश-कलात्मने नमः'** से उस जल में पूजन कर उसमें **'ॐ गङ्गे च०'** मन्त्र से सूर्य-मण्डल से तीर्थों का आवाहन करे। तदनन्तर अपने हृदय से **'श्रीछिन्नमस्ते ! इहावह इह तिष्ठ'** से इष्ट-देवता का उस पात्र में आवाहन कर वहीं **'हुं'** से उसका अव-गुण्ठन कर उसे गालिनी-मुद्रा दिखावे। फिर **'वौषट्'** से उस जल का वीक्षण कर, षडङ्ग मन्त्रों से सकली-करण कर, **'नमः'** से गन्ध-पुष्प द्वारा वहाँ देवता का पूजन कर मत्स्य-मुद्रा से उसे आच्छादित कर दस बार मूल-मन्त्र का जप करे। तब **'वं'** से धेनु-मुद्रा दिखा-कर अस्त्र से उसका संरक्षण करे। तब उस जल से अपना और पूजा-सामग्री का मूलमन्त्र-उच्चारणपूर्वक

तीन बार अभिषिञ्चन करे।*

अब यन्त्र-राज की स्थापना के लिए एक सुन्दर चौकी अपने सामने रखे। फिर एक अच्छी सुन्दर तश्तरी में श्री भगवती छिन्नमस्ता के आवाहन-पूजन के लिए अष्ट-गन्ध या लाल चन्दन से उनके यन्त्र की रचना करे। यथा—

पहले एक अधोमुख त्रिकोण बनावे। उस त्रिकोण के मध्य में तीन वृत्त बनावे। फिर सबसे भीतर के वृत्त में तीन द्वारों वाला एक अधोमुख त्रिकोण बनावे। इसके बाद प्रथम त्रिकोण के बाहर एक अष्ट-कोण और उसके बाहर एक अष्ट-दल की रचना करे। अष्ट-दल के बाहर तीन रेखावाले चार द्वारों से युक्त भूपुर की रचना करे। सबसे भीतर के त्रिकोण के मध्य में 'हूं' और प्रथम त्रिकोण के तीनों कोणों में 'हूं फट्' लिखे।

इस प्रकार यन्त्र बनाकर और उस तश्तरी को सामने की चौकी पर रखकर पीठों का पूजन सबसे

---

*शङ्ख-स्थापन के अनन्तर वीर साधक कलश-स्थापन तथा द्वितीयादि का शोधन कर श्रीपात्रादि की स्थापना करते हैं। फिर विन्दु-स्वोकार-पर्यन्त कर्म कर यन्त्र-राज की रचना करते हैं।

भीतर के त्रिकोण के मध्य में करे। यथा—

ॐ आधार-शक्तये नमः, ॐ कूर्माय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ क्षीर-समुद्राय नमः, ॐ रत्न-दीपाय नमः, ॐ कल्प-वृक्षाय नमः, ॐ चिन्तामणि-गृहाय नमः, ॐ रत्न-वेदिकायै नमः।

रत्न-वेदिका की आठों दिशाओं में—**ॐ धर्माय नमः** पूर्व में, **ॐ ज्ञानाय नमः** दक्षिण में, **ॐ वैराग्याय नमः** पश्चिम में, **ॐ ऐश्वर्याय नमः** उत्तर में, **ॐ अधर्माय नमः** आग्नेय-कोण में, **ॐ अज्ञानाय नमः** नैर्ऋत्य-कोण में, **ॐ अवैराग्याय नमः** वायव्य-कोण में, **ॐ अनैश्वर्याय नमः** ईशान-कोण में।

रत्न-वेदिका के मध्य में—**ॐ पद्माय नमः।**

पद्म के नीचे—**आनन्द-कन्दाय नमः, सम्विन्नालाय नमः, सर्व-तत्वात्मक कमलाय नमः। मं वह्नि-मण्डलाय नमः, अं अर्क-मण्डलाय नमः, उं सोम-मण्डलाय नमः, सं सत्वाय नमः, रं रजसे नमः, तं तमसे नमः, आं आत्मने नमः, अं अन्तरात्मने नमः, पं परमात्मने नमः, ह्रीं ज्ञानात्मने नमः।**

पद्म के मध्य में—**रति-कामाभ्यां नमः।**

अब पद्म के आठ दलों में पूर्वादि-क्रम से आठ पीठ-शक्तियों की पूजा करे। यथा—

ॐ जयायै नमः, ॐ विजयायै नमः, ॐ अजितायै

नमः, ॐ अपराजितायै नमः, ॐ नित्यायै नमः, ॐ विलासिन्यै नमः, ॐ दोग्ध्र्यै नमः, ॐ अघोरायै नमः।

फिर नवीं पीठ-शक्ति का 'ॐ मङ्गलायै नमः' से पद्म के मध्य में पूजन करे।

अब भगवती छिन्नमस्ता का ध्यान अपने नाभि-मण्डल में करे। यथा—

स्व-नाभौ नीरजं ध्यायेदर्धं विकसितं सितं।
तत्पद्म-कोष-मध्ये मण्डल-चण्ड-रोचिषः॥
जपा-कुसुम-सङ्काशं रक्त-बन्धूक-सन्निभं।
रज.-सत्व-तमो रेखा-योनि-मण्डल-मण्डितम्॥
पध्ये तु तां महादेवीं सूर्य-कोटि-सम-प्रभाम्।
छिन्नमस्तां करे वामे धारयन्तीं स्व-मस्तकम्॥
प्रसारित-मुखीं भीमां लेलिहानाग्र-जिह्विकां।
पिबन्तीं रौधरीं धारां निज-कण्ठ-विनिर्गतां॥
विकीर्ण-केश-पाशाञ्च नाना-पुष्प-समन्वितां।
दक्षिणे च करे कर्त्रीं मुण्ड-माला-विभूषितां॥
दिगम्बरां महाघोरां प्रत्यालीढ-पद-स्थिताम्।
अस्थि-माला-धरां देवीं नाग-यज्ञोपवीतिनीम्॥
रति-कामोपरिष्ठांच सदा ध्यायन्ति मन्त्रिणः।
सदा षोडश-वर्षीयां पीनोन्नत-पयोधराम्॥

देवी के दाहिनी ओर खड़ी वर्णिनी शक्ति का ध्यान करे। यथा—

वर्णिनीं लोहितां सौम्यां मुक्त-केशीं दिगम्बरां ।
देवी-गलोच्छलद्रक्त-धारा-पानं प्रकुर्वतीम् ॥
नाग-यज्ञोपवीताङ्गीं कर्त्रि-खर्पर-हस्तकाम् ।
ज्वलत्तेजोमयीं देवीं प्रत्यालीढ-पद-स्थिताम् ॥
सदा द्वादश-वर्षीयां मुण्ड-माला-विभूषिताम् ।

देवी के बाईं ओर खड़ी डाकिनी शक्ति का ध्यान करे। यथा—

डाकिनीं वाम-पार्श्वे तु कल्पान्त-दहनोपमाम् ।
विद्युच्छटाभ-नयनां दन्त-पंक्ति-वलाकिनीम् ॥
दंष्ट्रा कराल-वदनां पीनोन्नत-पयोधराम् ।
महादेवीं महाघोरां मुक्त-केशीं दिगम्बराम् ॥
लेलिहान-महा-जिह्वां मुण्ड-माला-विभूषिताम् ।
कपाल-कर्त्रिका-हस्तां सदा भीषण-रूपिणीम् ॥
देवी-गलोच्छलद्रक्त-धारा-पानं प्रकुर्वतीम् ।

इस प्रकार ध्यान करता हुआ भगवती छिन्नमस्ता का यन्त्र-राज के भीतरी त्रिकोण के मध्य में ध्यान करता हुआ उनको निम्न मन्त्र से आसन प्रदान करे—
वज्र-वैरोचनीये एहि एहि इहासनं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं देहि देहि मम शत्रून् मारय मारय हुं हुं फट् स्वाहा ।

यह मन्त्र पढ़कर पद्म-मुद्रा से पुष्प का आसन प्रदान करे। फिर उस पुष्पासन का पूजनकर पुष्पाञ्जलि

देकर देवी का निम्न मन्त्र से आवाहन करे—**सर्व-सिद्धिप्रदे डाकिनीये वज्र-वैरोचनीये एहि एहि इहावह इह तिष्ठ हुं हुं फट् स्वाहा ।**

इस प्रकार आवाहन कर धेनु और योनि मुद्राएँ दिखाकर प्राण-प्रतिष्ठा करे । यथा—

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं हौं हंसः छिन्न-मस्तायाः प्राणा इह प्राणाः । आं ह्रीं क्रों·····हंसः छिन्नमस्तायाः जीव इह स्थितः । आं ह्रीं क्रों···हंस छिन्नमस्तायाः सर्वेन्द्रियाणि । आं ह्रीं क्रों·····हंसः छिन्नमस्तायाः वाङ्-मनश्चक्षुः-श्रोत्र-घ्राण-प्राण-पदानि इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

प्राण-प्रतिष्ठा कर चुकने पर हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—

देवेशि भक्ति-सुलभे परिवार-समन्विते ।
यावत्त्वां पूजयिष्यामि तावत् त्वं सुस्थिरा भव ॥

इस प्रकार प्रार्थना कर देवता के अङ्गों में यथा-क्रम षडङ्गों का न्यास करे । यथा—

ह्रां हृदयाय नमः । ह्रीं शिरसे स्वाहा । ह्रूं शिखायै वषट् । ह्रैं कवचाय हुं । ह्रौं नेत्र-त्रयाय वौषट् । ह्रः अस्त्राय फट् ।

अब देवता का षोडशोपचार-पूजन करे । यथा—

१० षोडशोपचार-पूजन

पाद्य—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि'** यह कहकर चरणों में पाद्य-पात्र या शङ्ख-पात्र का जल अर्पित करे। (अनामा-अंगुष्ठ से)।

अर्घ्य—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं अर्घ्यं स्वधा'** से भगवती के शिर पर शङ्ख-पात्र का जल अर्पित करे (सब अँगुलियों की मुद्रा से)।

आचमन—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः आचमनीयं स्वधा'** से आचमनीय पात्र या सामान्यार्घ्य का जल श्रीमुख में आचमन के लिए प्रदान करे। (अनामा-मध्यमा-अंगुष्ठ से)।

मधुपर्क—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं मधुपर्कं स्वधा'** से मधुपर्क श्रीमुख में प्रदान करे। (अधोमुखी अनामा-अंगुष्ठ से)।

पुनः आचमनीय—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं शुद्ध आचमनीयं समर्पयामि स्वधा'** से आचमनीय पात्र या सामान्य-अर्घ्य का जल श्रीमुख में आचमन के लिये पुनः प्रदान करे। (अनामा, मध्यमा, तर्जनी, अंगुष्ठ से)।

स्नान—अब साधक भगवती को **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः'** यह पढ़कर ज्ञान-मुद्रा से उन पर गन्धाक्षत छोड़ कर उन्हें पृथक् स्थान में कल्पित स्नान-

मण्डप में ले जाने की भावना करे। वहाँ वह **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः उद्वर्तनार्थे हरिद्रा-तैलं समर्पयामि'** यह पढ़कर उन पर गन्धाक्षत छोड़कर हल्दी-तेल लगाने की भावना करे। फिर वह **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः'** यह पढ़कर कनिष्ठा-रहित दाहिने हाथ की मूठ-मुद्रा उन्हें दिखाकर सामान्यार्घ्य का जल छोड़कर उनको स्नान कराने की भावना करे। फिर वह **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः'** यह पढ़कर ज्ञान-मुद्रा से उन पर अक्षत छोड़कर सूखे कपड़े से उनके अङ्ग पोछने की भावना करे।

वस्त्र—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं वस्त्रं उत्तरीयम् च निवेदयामि'** यह कहकर शुद्ध रेशमी लाल रङ्ग का वस्त्र पहनाने को प्रदान करे अथवा ज्ञान-मुद्रा से उन पर अक्षत छोड़कर उसे पहनाने की भावना करे। (अंगुष्ठ, अनामा, मध्यमा से)।

आभूषण—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इमानि भूषणानि निवेदयामि'** से आभूषण प्रदान करे अथवा ज्ञान-मुद्रा से अक्षत छोड़कर भिन्न-भिन्न अङ्गों में उपर्युक्त रत्न-जटित सोने के आभूषण पहना चुकने पर साधक **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः'** यह कहकर ज्ञान-मुद्रा से उन पर अक्षत छोड़कर यह भावना करे कि भगवती स्नान-मण्डप से निकल मन्द गति से चल-

कर श्रीचक्र में अपने स्थान पर प्रसन्न मन से आ विराजी हैं।

गन्ध—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं गन्धं समर्पयामि'** यह कहकर भगवती के अङ्गों में अष्ट-गन्ध प्रदान करे। (मध्यमा, अनामा, अंगुष्ठ से)।

पुष्प—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै वौषट् इमानि बिल्व-पत्र-सहित-पुष्पाणि समर्पयामि'** यह कहकर भगवती को बिल्व-पत्र सहित पुष्प, पुष्प-हार आदि प्रदान करे। (अंगुष्ठ, तर्जनी की मुद्रा से)।

अक्षत—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै वौषट् स्वयम्भू-कुसुमादिकं अक्षतानि च समर्पयामि'** यह कहकर भगवती को अक्षत तथा स्वयम्भू-कुसुमादि प्रदान करे। (सब अंगुलियों के संयोग से बनी मुद्रा से)।

धूप—सामान्यार्घ्य के जल से धूप-पात्र का **'फट्'** मन्त्र से प्रोक्षण करे। उसमें अग्नि रखकर और धूप छोड़कर उसका **'नमः'** मन्त्र से गन्धाक्षत-पुष्प से पूजन करे। फिर उसे भगवती के सामने स्थापित कर बाईं तर्जनी से उसको स्पर्श करे। तब **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः धूपं निवेदयामि'** कहे। फिर उस पर विशेषार्घ्य का द्रव्य छोड़कर उसे भगवती को प्रदान करे। तब **'ॐ गज-ध्वनि मन्त्र-मातः स्वाहा'** यह मन्त्र पढ़कर

गन्धाक्षत-पुष्प से घण्टा का पूजन करे। फिर बाएँ हाथ में घण्टा लेकर उसे बजाता हुआ मध्यमा, अनामिका और अँगूठे की मुद्रा से धूप-पात्र उठाकर भगवती को धूप प्रदान करता हुआ साधक देवता की गायत्री तथा मूल-मन्त्र का जपकर तीन बार धूप-पात्र घुमाकर धूप प्रदान करे। (धूप-पात्र देवता के बाएँ रखे)।

दीप—सामान्य अर्घ्य के जल से दीप-पात्र का **'फट्'** मन्त्र से प्रोक्षण कर उसमें बत्ती रखकर उसे जलावे। फिर **'नमः'** मन्त्र से गन्धाक्षत और पुष्प से उसका पूजन कर देवता के सामने रखकर बाईं मध्यमा से छूकर **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः दीपं निवेदयामि'** कहे। फिर विशेषार्घ्य का द्रव्य उस पर छोड़कर घण्टा बाएँ हाथ में लेकर उसे बजाता हुआ मध्य अनामिका के बीच में दीप-पात्र पकड़ और उस पर अँगूठा रखकर तीन बार घुमाकर आरती करता हुआ और मूलमन्त्र तथा गायत्री का जप करता हुआ दीप प्रदान करे। फिर उसे देवता के दाहिने रखे।

नैवेद्य *—इसके बाद नैवेद्य के पदार्थ स्वर्ण आदि

---

* वीराचारी साधक पहले एक पात्र में कारण लेकर देवता के सम्मुख आधार पर रख **'ॐछिन्नमस्ते ! छिन्नमस्ते ! छिन्नमस्ते ! हूँ हूँ अमृतमासवं विधि-**

किसी सुन्दर पात्र में लेकर अपने सामने त्रिकोण के मण्डल पर रखे। फिर 'हुं' मन्त्र से अवगुण्ठन-मुद्रा द्वारा उसका अवगुण्ठन करे। वायु-बीज 'यं' का उसके ऊपर १६ बार जप कर उसके दोषों का शोषण करे। फिर अग्नि-वीज 'रं' का १६ बार जप कर उन दोषों को जला दे। तब 'वं' वरुण-बीज का १६ बार जप करता हुआ धेनु-मुद्रा दिखाकर उसे अमृतमय करे। फिर उसके ऊपर सात बार मूलमन्त्र का जप करे। तब बाएं अँगूठे से नैवेद्य-पात्र को स्पर्श किये हुए—**'नैवेद्यं निवेदयामि'** यह कहकर दाहिने हाथ की तत्त्व-मुद्रा से उस पर सामान्यार्घ्य का जल छोड़कर देवता को नैवेद्य निवेदित करे। इसके बाद एक पात्र में जल

वत् कुरु कुरु स्वाहा'—इस मन्त्र को सात बार पढ़ते हुए पात्र के ऊपर हाथ रखकर कारण को अभिमन्त्रित करे। फिर ग्रास-मुद्रा से पात्र को उठाकर दाहिने हाथ में शुद्धि-खण्ड आदि लेकर दोनों हाथों को एक दूसरे से मिलाकर दोनों वस्तुएँ देवता को निम्न मन्त्र पढ़कर निवेदित करे—**'मूलं शुद्ध्यादि-सहितमासवं निवेदयामि'** यह मन्त्र पढ़कर साधक यह भावना करे कि देवता ने शुद्धि-सहित आसव का पान किया है। फिर वह पात्र और शुद्धि-खण्ड को आधार पर रख दे।

लेकर **'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै नमः इदं जलं निवेदयामि'** यह पढ़कर नैवेद्य के पास उसे आधार पर रख दे। **'प्राणाय स्वाहा, अपानाय स्वाहा, समानाय स्वाहा, उदानाय स्वाहा, व्यानाय स्वाहा'** आदि मन्त्र पढ़ता हुआ पाँचों मुद्राएँ क्रम से दिखाता हुआ अन्त में बाएँ हाथ से ग्रास-मुद्रा दिखाकर यह भावना करे कि देवता प्रसन्न-मन होकर भोजन कर रही है।

जब साधक यह समझ ले कि देवता पूर्ण रूप से भोजन करके पानी पी चुकी है, तब वह उसको पुनः आचमन करावे।

पुनः आचमन—**'मूलं श्रीछिन्नमस्तायै स्वधा आचमनीयं समर्पयामि'** यह पढ़ कर आचमनीय-पात्र या सामान्यार्घ्य का जल देवता के मुख में आचमन के लिये प्रदान करे।

ताम्बूल—देवता को अब साधक ताम्बूल प्रदान करे। कर्पूरादि सुगन्धित द्रव्य पड़े हुए ताम्बूल एक पात्र में रख उसे बाएँ अँगूठे से स्पर्श कर **'ताम्बूलं निवेदयामि'** यह कह सामान्यार्घ्य का जल छोड़कर निवेदन करे और भावना द्वारा देवता के मुख में पान खिला दे।*

---

* यहाँ वीर साधक विशेषार्घ्य के द्रव्य से देवता

फिर योनि-मुद्रा दिखाकर नमस्कार करे।

इसके बाद देवो को बलि प्रदान करे। एक पात्र में सकल पदार्थ सजाकर देवी के सम्मुख रखे और निम्न मन्त्र पढ़कर तत्व-मुद्रा से बलि समर्पित करे—

ॐ सर्व-सिद्धि-वर्णनीये वज्र-वैरोचनीये एहि एहि इमं बलि गृह्ण-गृह्ण मम सिद्धि देहि-देहि मम शत्रून् मारय-मारय करालिके हूं फट् स्वाहा।

फिर देवी की दाहिनी ओर '**ॐ वर्णिन्यै नमः**' से और बाईं ओर '**ॐ डाकिन्यै नमः**' से दोनों शक्तियों की पूजा कर पूर्ववत् देवी के षडङ्गों का पुनः पूजन करे। तब देवो की दाहिनी ओर '**ॐ शङ्ख-निधये नमः**' से और बाईं ओर '**ॐ पद्म-निधये नमः**' से पूजन कर निम्न प्रकार पूजा करे—

पूर्वे ॐ लक्ष्म्यै नमः। दक्षिणे ॐ लज्जायै नमः। पश्चिमे ॐ मायायै नमः। उत्तरे ॐ वाण्यै नमः। आग्नेये ॐ ब्रह्मणे नमः। नैर्ऋत्ये ॐ विष्णवे नमः। वायव्ये ॐ रुद्राय नमः। ईशाने ॐ ईश्वराय नमः। मध्ये ॐ सदाशिवाय नमः।

का तीन बार तर्पण करे। यथा—'**मूलं सांगां सपरिकरां श्रीछिन्नमस्तायै श्रीपादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि स्वाहा।**

इसके बाद देवता को पाँच पुष्पाञ्जलियाँ अर्पित करे। तब आवरण-पूजा के लिए देवता से आज्ञा माँगे। यथा—

ॐ सच्चिन्मयि परे देवि परामृत-रस-प्रिये।
अनुज्ञां छिन्नके देहि परिवारार्चनाय मे॥

११ आवरण-पूजन

प्रथम आवरण—भूपुर के बाहर पूर्वादि-क्रम से प्रथम रेखा में दस दिक्पालों के अस्त्रों का पूजन करे। यथा—

पूर्वे ॐ वं वज्राय नमः वज्र-श्रीपादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि नमः। आग्नेये ॐ शं शक्तये नमः शक्ति-श्रीपा०। दक्षिणे ॐ दं दण्डाय नमः दण्ड-श्रीपा०। नैर्ऋत्ये ॐ खं खड्गाय नमः खड्ग-श्रीपा०। पश्चिमे ॐ पां पाशाय नमः पाश-श्रीपा०। वायव्ये ॐ अं अंकुशाय नमः अंकुश-श्रीपा०। उत्तरे ॐ गं गदायै नमः गदा-श्रीपा०। ईशाने ॐ त्रिं त्रिशूलाय नमः त्रिशूल-श्रीपा०। पश्चिम-निर्ऋति-मध्ये ॐ पं पद्माय नमः पद्म-श्रीपा०। ईशान-पूर्व-मध्ये ॐ चं चक्राय नमः चक्र-श्रीपा०।

अभीष्ट-सिद्धिं मे देहि शरणागत-वत्सले।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्॥

यह पढ़कर पुष्पाञ्जलि दे और शङ्ख-पात्र का विन्दु छोड़कर 'पूजितास्तर्पिताः सन्तु' कहे ।*

द्वितीय आवरण—भूपुर की मध्य रेखा में अस्त्रों के पास क्रम से दस दिक्पालों की पूर्वादि-क्रम से पूर्ववत् पूजा करे । यथा—

ॐ लं इन्द्राय नमः इन्द्र-श्रीपा० । ॐ रं अग्नये नमः अग्नि-श्रीपा० । ॐ यं यमाय नमः यम-श्रीपा० । ॐ क्षं निऋतये नमः निऋति-श्रीपा० । ॐ वं वरुणाय नमः वरुण-श्रीपा० । ॐ यं वायवे नमः वायु-श्रीपा० । ॐ कुं कुबेराय नमः कुबेर-श्रीपा० । ॐ हं ईशानाय नमः इशान-श्रीपा० । ॐ आं ब्रह्मणे नमः ब्रह्म-श्रीपा० । ॐ ह्रीं अनन्ताय नमः अनन्त-श्रीपा० ।

ॐ अभीष्ट-सिद्धि···द्वितीयावरणार्चनम् ।

यह पढ़कर पूर्ववत् पुष्पाञ्जलि और विन्दु छोड़े ।

तृतीय आवरण—भूपुर के भीतर भीतरी रेखा पर द्वारों में पूर्वादि-क्रम से चार द्वारपालों का पूजन पूर्ववत् करे । यथा—

ॐ कराल नमः कराल-श्रीपा० । ॐ विकराल नमः विकराल-श्रीपा० । ॐ अतिकराल नमः अति-

---

* आवरण-पूजन में वीर साधक ही 'तर्पयामि नमः' कहते हैं और विन्दु छोड़ते हैं ।

कराल-श्रीपा० । ॐ महाकालाय नमः महाकाल-श्रीपा० ।

ॐ अभीष्ट-सिद्धि···तृतीयावरणार्चनम् ।

पूर्ववत् पुष्पाञ्जलि और विन्दु छोड़े ।

चतुर्थ-आवरण—अष्ट-दलों में पूर्वादि-क्रम से आठ शक्तियों की पूर्ववत् पूजा करे । यथा—

ॐ एकलिङ्गायै नमः एकलिङ्ग-श्रीपा० । ॐ योगिन्यै नमः योगिनी-श्रीपा० । ॐ डाकिन्यै नमः डाकिनीश्रीपा० । ॐ भैरव्यै नमः भैरवीश्रीपा० । ॐ महाभैरव्यै नमः महाभैरवी-श्रीपा० । ॐ इन्द्राक्ष्यै नमः इन्द्राक्षी-श्रीपा० । ॐ असितांग्यै नमः असिताङ्गी-श्रीपा० । ॐ संहारिण्यै नमः संहारिणी-श्रीपा० ।

ॐ अभीष्ट-सिद्धि···चतुर्थावरणार्चनम् ।

पूर्ववत् पुष्पाञ्जलि और विन्दु छोड़े ।

पञ्चम-आवरण—षट्-कोण के केसरों में पूर्वादि-क्रम से पूर्ववत् षडङ्गों का पूजन करे । यथा—

आग्नेये ॐ आं खड्गाय हृदयाय स्वाहा हृदय-शक्ति श्रीपादुकां पूजयामि नमः तर्पयामि नमः । ईशाने ॐ ईं सुखड्गाय शिरसे स्वाहा शिर-शक्ति श्रीपा० । नैर्ऋत्ये ॐ ऊं वज्राय शिखायै स्वाहा शिखा-शक्ति श्रीपा० । वायव्ये ॐ ऐं पाशाय कवचाय स्वाहा कवच-शक्ति श्रीपा० । मध्ये ॐ औं अंकुशाय नेत्र-त्रयाय स्वाहा नेत्र-शक्ति-श्रीपा० । दिक्षु ॐ अः

सुरक्षा असुरक्षाय अस्त्राय फट् स्वाहा अस्त्र-शक्ति-श्रीपा० ।

अभीष्ट-सिद्धिं···पञ्चमावरणार्चनम् ।

पूर्ववत् पुष्पाञ्जलि और विन्दु छोड़े ।

षष्ठ आवरण—षट्-कोण के भीतर और त्रि-वृत्तों से बाहर के त्रिकोण में पूजन करे । यथा—

देवो के सम्मुख के कोण में—**ॐ ऐं छिन्नमस्तायै नमः छिन्नमस्ता श्रीपा०**' से, देवी की दाहिनी ओर के कोण में—'**ॐ ऐं डाकिन्यै नमः डाकिनी श्रीपा०**' से और बाई ओर के कोण में—'**ॐ ऐं वर्णिन्यै नमः वर्णिनी श्रीपा०**' से ।

ॐ अभीष्ट-सिद्धिं···षष्ठावरणार्चनम् ।

पूर्ववत् पुष्पाञ्जलि और विन्दु छोड़े ।*

---

* यहाँ छिन्नमस्ता का पूजा-यन्त्र मन्त्र-महार्णव के अनुसार दिया गया है, जो पद्धति और मन्त्र-महोदधि से भिन्न है । मन्त्र-महोदधि में केवल त्रिकोण, षट्कोण, अष्ट-दल और भूपुर हैं । पद्धति में त्रि-द्वार-युक्त त्रिकोण, त्रिवृत्त, पुनः त्रिकोण, अष्ट-दल और त्रि-रेखात्मक भूपुर हैं ।

पद्धति में आवरण-पूजन का क्रम भिन्न है, जो इस प्रकार है—

इस प्रकार आवरण-पूजन कर चुकने पर धूप, दीप एवं नैवेद्य पूर्ववत् पुनः प्रदान कर देवता को नमस्कार करे और उनके श्रीचरणों में पुष्पांजलि

(१) षडङ्गों का आग्नेय, ईशान, नैर्ऋत्य, वायव्य, मध्य और दिशाओं में पूजन करे।

(२) आठों दलों में पूर्वादि-क्रम से—'**ॐ ह्रीं काल्यै नमः, ॐ ह्रीं वर्णिन्यै नमः, ॐ ह्रीं डाकिन्यै नमः, ॐ ह्रीं भैरव्यै नमः, ॐ ह्रीं महाभैरव्यै नमः, ॐ ह्रीं इन्द्राक्ष्यै नमः, ॐ ह्रीं पिङ्गलाक्ष्यै नमः, ॐ ह्रीं संहारिण्यै नमः**' से आठ शक्तियों का पूजन करे।

(३) पद्म के मध्य में अर्थात् भीतर के त्रिकोण में '**हूं हूं फट् स्वाहा नमः**' से भगवती छिन्नमस्ता का पूजन करे। फिर देवी के सम्मुख' **ॐ क्रोध-भैरवाय नमः**' से, देवी की दक्षिण ओर '**ॐ सम्राट् छन्दसे नमः**' से देवी की उत्तर ओर '**ॐ मन्त्र-वर्णेभ्यो नमः**' से, पुनः उत्तर ओर '**ॐ बीज-शक्तिभ्यां नमः**' से पूजन करे।

(४) पद्म-दलों के अग्र-भाग में पूर्वादि क्रम से '**ॐ ब्राह्म्यै नमः, ॐ माहेश्वर्यै नमः, ॐ कौमार्यै नमः, ॐ वैष्णव्यै नमः, ॐ वाराह्यै नमः, ॐ इन्द्राण्यै नमः, ॐ चामुण्डायै नमः, ॐ महा-लक्ष्म्यै नमः**' से पूजन

प्रदान करे। ❀

१२ मन्त्र-जप आदि

इसके बाद साधक कर-षडङ्ग आदि का न्यास कर मूलमन्त्र का जप करे। पहले वह **'वज्र-वैरोचनीये हुं'** इस कुल्लिका मन्त्र का अपने मूर्धा पर दस बार जप करे। फिर अपने सिर पर **'श्रीं ह्रीं हुं'** इस मालिनी-मन्त्र का सौ बार जप करे। इसके बाद **'ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्र-वैरोचनीये हुं हुं फट् स्वाहा ऐं स्वाहा'** इस दीपिनी मन्त्र का दस बार जप करे। तदनन्तर माला

करे।

(५) भूपुर के चारों द्वारों में निम्न प्रकार पूजन करे—

पूर्वे ॐ करालाय नमः, दक्षिणे ॐ विकरालाय नमः, पश्चिमे ॐ अतिकरालाय नमः, उत्तरे ॐ महा-करालाय नमः।

इस प्रकार पद्धति में पाँच आवरण दिये गये हैं।

❀वीर साधक यहाँ मत्स्य-मांसादि की बलि निम्न मन्त्र से प्रदान करता है—**ॐ सर्व-सिद्धि-प्रदे वणिनीये सर्व-सिद्धि-प्रदे डाकिनीये वज्र-वैरोचनीये एह्येहि बलिं गृह्ण गृह्ण मम सिद्धिं देहि ह्रीं फट् स्वाहा।**

लेकर उसका पूजन करे और तब इष्ट-मन्त्र का १०८ या १००८ बार जप करे। भगवती छिन्नमस्ता का मन्त्र यह है—

श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं वज्र-वैरोचनीये हूं हूं फट् स्वाहा*।

मन्त्र-जप कर चुकने पर 'ॐ ह्रीं ॐ' इस शापोद्धार-मन्त्र का १०८ बार जप करे। तब निम्न मन्त्रों से देवी के हाथ में जल छोड़ते हुये जप-फल समर्पित करे—

ॐ गुह्याति-गुह्य-गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

इसके बाद स्तोत्र, कवच आदि का यथा-शक्ति पाठ कर एक बार प्रदक्षिणा करे।

१३ विसर्जन

---

* मन्त्र-महोदधि में मन्त्र और ध्यान इस प्रकार दिये हैं—**ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्र-वैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा।**

भास्वन्मण्डल-मध्यगां निज-शिराश्छिन्नं विकीर्णालकं।
स्फारास्यं प्रपिबद् गलात्स्वरुधिरं वामे करे बिभ्रतीम्॥
याभासक्त-रति-स्मरोपरि-गतां सख्यौ निजे डाकिनी।
वर्णिन्यौ परिदृश्य-मोद-कलितां श्रीछिन्नमस्तां भजे॥

भगवती को संहार-मुद्रा दिखावे और उन्हें अपनी अञ्जलि में विराजमान भावित कर वाम-नासा-मार्ग से अपने अन्तर में निम्न मन्त्र पढ़ते हुये विसर्जित करे—

योनि-मुद्रा-समारूढां प्रदीप-कलिकोज्ज्वलाम् ।
कृष्ण-पक्षे विधुमिव क्रमेण क्षीणतां गताम् ॥
उत्तरे शिखरे देवि भूम्यां पर्वत-वासिनि ।
ब्रह्म-योनि-समुत्पन्ने गच्छ देवि ममान्तरम् ॥

तदनन्तर ईशान-कोण में मण्डल बनाकर निम्न मन्त्र से पूजन करे—**ॐ उच्छिष्ट-चाण्डालिन्यै निर्माल्य-भोजिन्यै स्वाहा ।**

इसके बाद नैवेद्य ग्रहण कर चन्दन लगाकर चरणोदक का पान कर यथा-सुख विहार करे ।

परिशिष्ट

१—ब्रह्म-कृतं छिन्नमस्ता-स्तोत्रम्

ईश्वर उवाच—

स्तवराजमहं वन्दे वैरोचन्याः शुभ-प्रदम् ।

नाभौ शुभ्रारविन्दं तदुपरि विलसन्मण्डलं चण्ड-रश्मेः । संसारस्यैकसारां त्रिभुवन-जननीं धर्म-कामार्थ-दात्रीम् ॥ तस्मिन्मध्ये त्रि-मार्गे त्रितय-तनु-धरां छिन्न-मस्तां प्रशस्ताम् । तां वन्दे छिन्नमस्तां शमन-भय-हरां योगिनीं योग-मुद्राम् ॥ १ ॥

नाभौ शुद्ध-सरोज-वक्त्र-विलसद्-बन्धूक-पुष्पा-रुणं । भास्वद्-भास्कर-मण्डलं तदुदरे तद्-योनि-चक्रं महत् ॥ तन्मध्ये विपरीत-मैथुन-रत-प्रद्युम्न-सत्कामिनी-पृष्ठस्थां तरुणार्क-कोटि-विलसत्तेजः-स्वरूपां भजे ॥२॥

वामे छिन्न-शिरोधरां तदितरे पाणौ महत्कर्तृकां । प्रत्यालीढ-पदां दिगन्त-वसनामुन्मुक्त-केश-व्रजाम् ॥ छिन्नात्मीय-शिरस्समुच्छलदसृग्धारां पिबन्तीं परां । बालादित्य-सम-प्रकाश-विलसन्नेत्र-त्रयोद्भा-सिनीम् ॥ ३ ॥

वामादन्यत्र नालं बहु-गहन-गलद्-रक्त-धारा-भिरुच्चैः । गायन्तीमस्थि-भूषां कर-कमल-लसत्कर्तृका-मुग्र-रूपाम् ॥ रक्तामारक्त-केशीमपगत-वसनां वर्णिनी-मात्म-शक्तिं । प्रत्यालीढोरु-पादामरुणित-नयनां योगिनीं योग-निद्राम् ॥ ४ ॥

दिग्वस्त्रां मुक्त-केशीं प्रलय-घन-घटा-घोर-रूपां प्रचण्डां । दंष्ट्रा दुष्प्रेक्ष्य वक्त्रोदर-विवर-लसल्लोल-जिह्वाग्र-भासाम् ॥ विद्युल्लोलाक्षि-युग्मां हृदय-तट-लसद्-भोगिनीं भीम-मूर्तिम् । सद्यश्छिन्नात्म-कण्ठ-प्रगलित-रुधिरैर्डाकिनीं वर्द्धयन्तीम् ॥ ५ ॥

ब्रह्मेशानाच्युताद्यैः शिरसि विनिहता मन्द-पादार-विन्दैराप्तैर्योगीन्द्र-मुख्यैः प्रति-पदमनिशं चिन्तितां चिन्त्य-रूपाम् ॥ संसारे सार-भूतां त्रिभुवन-जननीं छिन्नमस्तां प्रशस्तामिष्टां तामिष्ट-दात्रीं कलि-कलुष-हरां चेतसा चिन्तयामि ॥ ६ ॥

उत्पत्ति-स्थिति-संहृतीर्घटयितुं धत्ते त्रि-रूपां तनुं । त्रैगुण्याज्जगतो यदीय विकृतिर्ब्रह्माच्युतः शूल-भृत् ॥ तामाद्यां प्रकृतिं स्मरामि मनसा सर्वार्थ-संसिद्धये । यस्याः स्मेर-पदारविन्द-युगले लाभं भजन्ते नराः ॥ ७ ॥

अभिलषित-पर-स्त्री-योग-पूजा-परोऽहं । बहु-विध-

जन-भावारम्भ-सम्भावितोऽहम् ॥ पशु-जन-विरतोऽहं भैरवी-संस्थितोऽहं । गुरु-चरण-परोऽहं भैरवोऽहं शिवोऽहम् ॥ ८ ॥

इदं स्तोत्रं महा-पुण्यं ब्रह्मणा भाषितं पुरा । सर्व-सिद्धि-प्रदं साक्षान्महा-पातक-नाशनम् ॥ ९ ॥

यः पठेत्प्रातरुत्थाय देव्याः सन्निहितोऽपि वा । तस्य सिद्धिर्भवेद्देवि वाञ्छितार्थ-प्रदायिनी ॥ १० ॥

धनं धान्यं सुतं जायां हयं हस्तिनमेव च । वसुन्धरां महा-विद्यामष्ट-सिद्धि लभेद् ध्रुवम् ॥ ११ ॥

वैयाघ्राजिन-रञ्जित-स्व-जघनेऽरण्ये प्रलम्बोदरे । खर्वेऽनिर्वचनीय-पर्व-सुभगे मुण्डावली-मण्डिते ॥ कर्त्री कुन्द-रुचिं विचित्र-वनितां ज्ञाने दधाने पदे । मातर्भक्त-जनानुकम्पिनि महामायेऽस्तु तुभ्यं नमः ॥

॥इति ब्रह्म-कृतं छिन्नमस्ता-स्तोत्रम् ॥

२—त्रैलोक्य-विजय-कवचम्

श्री देव्युवाच—

कथिताश्छिन्नमस्तायाः या या विद्याः सुगोपिताः ।
त्वया नाथेन जीवेश श्रुताश्चाधिगता मया ॥ १ ॥
इदानीं श्रोतुमिच्छामि कवचं पूर्व-सूचितम् ।
त्रैलोक्य-विजयं नाम कवचं कथ्यतां प्रभो ॥ २ ॥

भैरव उवाच—

शृणु वक्ष्यामि देवीशि सर्व-देव-नमस्कृते ।
त्रैलोक्य-विजयं नाम कवचं विश्व-मोहनम् ॥ ३ ॥
सर्व-विद्या-मयं साक्षात् सुरासुर-जय-प्रदम् ।
धारणात् पठनादीशस्त्रैलोक्य-विजयी विभुः ॥ ४ ॥
ब्रह्मा नारायणो रुद्रो धारणात् पठनाद्यतः ।
कर्त्ता पाता च संहर्त्ता भुवनानां सुरेश्वरि ॥ ५ ॥
न देयं पर-शिष्येभ्य अभक्तेभ्यो विशेषतः ।
देयं शिष्याय भक्ताय प्राणेभ्योऽप्यधिकाय च ॥ ६ ॥
देव्याश्च छिन्नमस्तायाः कवचस्य च भैरवः ।
ऋषिर्विराट् च छन्दश्च देवता छिन्नमस्तका ॥ ७ ॥
त्रैलोक्य-विजये मुक्तौ विनियोगः प्रकीर्तितः ।
ॐ हूंकारो मे शिरः पातु छिन्नमस्ता बल-प्रदा ॥ ८ ॥
ह्रीं ह्रीं ऐं त्र्यक्षरी पातु भाल-वक्त्र-दिगम्बरी ।
श्रीं ह्रीं हूं ऐं दृशौ पातु मुण्डं कर्तृ-धरापि सा ॥ ९ ॥
सा विद्या प्रणवाद्यन्ता श्रुति-युग्मं सदावतु ।
वज्र-वैरोचनीये हूं फट् स्वाहा च भ्रुवादिकम् ॥ १० ॥
घ्राणं पातु छिन्नमस्ता मुण्ड-कर्तृ-विधारिणी ।
श्री-माया-कूर्च-वाग्वीजैः वज्र-वैरोचनीये हूं ॥ ११ ॥
हूं फट् स्वाहा महाविद्या षोडशी ब्रह्मरूपिणी ।
स्व-पार्श्वे बालिका चासृग्धारां पाययती मुदा ॥ १२ ॥
वदनं सर्वदा पातु छिन्नमस्ता स्व-शक्तिका ।

मुण्ड-कर्तृ-धरा रक्ता साधकाभीष्ट-दायिनी ॥ १३ ॥
वर्णिनी-डाकिनी-युक्ता सापि मामभितोऽवतु ।
रामाद्या पातु जिह्वाञ्च लज्जाद्या पातु कण्ठकं ॥ १४ ॥
कूर्च्चाद्या हृदयं पातु वागाद्या स्तन-युग्मकम् ।
रमया पुटिता विद्या पार्श्वौ पातु सुरेश्वरी ॥ १५ ॥
मायया पुटिता विद्या नाभि-देशं दिगम्बरी ।
कूर्चेन पुटिता देवी पृष्ठ-देशं सदावतु ॥ १६ ॥
वाग्बीज-पुटिता तेषां मध्यं पातु सशक्तिका ।
ईश्वरी कूर्च-वाग्बीजे वज्र-वैरोचनीये हूं ॥ १७ ॥
हूं फट्-स्वाहा महाविद्या सूर्य-कोटि-सम-प्रभा ।
छिन्नमस्ता सदा पायादूरु-युग्मं सशक्तिका ॥ १८ ॥
ह्रीं हूं वर्णिनी जानू श्रीं हूं ह्रीं हूं च डाकिनी-पदम् ।
सर्व-विद्या-स्थिता नित्या सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ॥ १९ ॥
प्राच्यां पायादेक-लिङ्गा योगिनी पावकेऽवतु ।
डाकिनी दक्षिणे पातु श्रीमहाभैरवी च माम् ॥ २० ॥
नैर्ऋत्यां सततं पातु भैरवी पश्चिमेऽवतु ।
इन्द्राणी पातु वायव्येऽसिताङ्गी पातु चोत्तरे ॥ २१ ॥
संहारिणी सदा पातु शिव-कोणे सकर्तृका ।
इत्यष्ट-शक्तयः पान्तु दिग्विदिक्षु सकर्तृकाः ॥ २२ ॥
क्रीं क्रीं क्रीं सा पातु पूर्वे हूं हूं मां पातुपावके ।
ह्रीं ह्रीं मां दक्षिणे पातु दक्षिणे कालिकाऽवतु ॥ २३ ॥

क्रीं क्रीं क्रीं चैव नैर्ऋत्यां ह्रीं ह्रीं मां पश्चिमेऽवतु।
ह्रीं ह्रीं पातु मरुत्कोणे स्वाहा पातु सदोत्तरे ॥ २४ ॥
महाकाली खड्ग हस्ता शिव-कोणे सदाऽवतु ।
तारा माया-वधूः कूर्चं फट्-कारा मां महा-मनुः ॥२५॥
खड्ग-कर्तृ-धरा तारा चोर्ध्व-देशं सदावतु ।
ह्रींस्त्रींहूं फट् च पाताले मांपातु चैकजटा सतो ॥२६॥
तारा तु सहिता खेऽव्यान्महा-नील-सरस्वती ।
इति ते कथितं देव्याः कवचं मन्त्र-विग्रहम् ॥ २७ ॥
यद्धृत्वा पठनाद् भीमः क्रोधाख्यो भैरवः प्रभुः ।
सुरासुर-मुनीन्द्राणां कर्ता हर्ता भवेत् स्वयम् ॥ २८ ॥
यस्याज्ञया मधुमती याति सा साधकालयम् ।
भूतिन्याद्याश्च योगिन्यो यक्षिण्याद्याश्च खेचराः ॥ २९ ।
आज्ञां गृह्णन्ति तास्तस्य कवचस्य प्रसादतः ।
एतदेव परंब्रह्म-कवचं मन्मुखोदितम् ॥ ३० ॥
देवीमभ्यर्च्य गन्धाद्यैर्मूलेनैव पठेत् सकृत् ।
सम्वत्सर-कृतायाश्च पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥ ३१ ॥
भूर्जे विलिखितं चैव गुटिकां काञ्चनी-स्थितां ।
धारयेद् दक्षिणे बाहौ कण्ठे वा यदि वान्यतः ॥३२॥
सर्वैश्वर्य-युतो भूत्वा त्रैलोक्यं वशमानयेत् ।
तस्य गेहे वसेल्लक्ष्मी वाणी च वदनाश्रमे ॥ ३३ ॥
ब्रह्मास्त्रादीनि शस्त्राणि तद्-गात्रे यान्ति सौम्यतां ।

इदं कवचमज्ञात्वा यो भजेत् छिन्नमस्तकाम् ॥
सोऽपि शस्त्र-प्रहारेण मृत्युमाप्नोति सत्वरम् ॥ ३४ ॥

॥ इति श्रीभैरव-तन्त्रे त्रैलोक्य-विजयं नाम छिन्नमस्ता-कवचम् ॥

३—अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम्

श्रीपार्वत्युवाच—

नाम्नां सहस्रं परमं छिन्नमस्ता-प्रियं शुभम् ।
कथितं भवता शम्भो सद्यः शत्रु-निकृन्तनम् ॥ १ ॥
पुनः पृच्छाम्यहं देव कृपां कुरु ममोपरि ।
सहस्र-नाम-पाठे च अशक्तो यः पुमान् भवेत् ॥ २ ॥
तेन किं पठ्यते नाथ तन्मे ब्रूहि कृपा-मय ।

श्री सदाशिव उवाच—

अष्टोत्तर-शतं नाम्नां पठ्यते तेन सर्वदा ॥ ३ ॥
सहस्र-नाम-पाठस्य फलं प्राप्नोति निश्चितम् ।

ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्ताष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रस्य सदाशिव ऋषिरनुष्टुप् छन्दः, श्रीछिन्नमस्ता देवता, मम सकल-सिद्धि-प्राप्तये जपे विनियोगः ॥

ॐ छिन्नमस्ता महाविद्या महाभीमा महोदरी ।
चण्डेश्वरी चण्ड-माता चण्ड-मुण्ड-प्रभञ्जिनी ॥ ४ ॥
महाचण्डा चण्ड-रूपा चण्डिका चण्ड-खण्डिनी ।
क्रोधिनी क्रोध-जननी क्रोध-रूपा कुहू कला ॥ ५ ॥

कोपातुरा कोपयुता कोप-संहार-कारिणी ।
वज्र-वैरोचनी वज्रा वज्र-कल्पा च डाकिनी ॥ ६ ॥
डाकिनी कर्म्म-निरता डाकिनी कर्म-पूजिता ।
डाकिनी सङ्ग-निरता डाकिनी प्रेम-पूरिता ॥ ७ ॥
खट्वाङ्ग-धारिणी खर्वा खड्ग-खप्पर-धारिणी ।
प्रेतासना प्रेत-युता प्रेत-सङ्ग-विहारिणी ॥ ८ ॥
छिन्न-मुण्ड-धरा छिन्न-चण्ड-विद्या च चित्रिणी ।
घोर-रूपा घोर-दृष्टिर्घोर-रावा घनोदरी ॥ ९ ॥
योगिनी योग-निरता जप-यज्ञ-परायणा ।
योनि-चक्र-मयी योनिर्योनि-चक्र-प्रवर्तिनी ॥ १० ॥
योनि-मुद्रा योनि-गम्या योनि-यन्त्र-निवासिनी ।
यन्त्र-रूपा यन्त्र-मयी यन्त्रेशी यन्त्र-पूजिता ॥ ११ ॥
कीर्त्या कर्पादिनी काली कङ्काली कल-कारिणी ।
आरक्ता रक्त-नयना रक्त-पान-परायणा ॥ १२ ॥
भवानी भूतिदा भूतिर्भूति-दात्री च भैरवी ।
भैरवाचार-निरता भूत-भैरव-सेविता ॥ १३ ॥
भीमा भीमेश्वरी देवी भीम-नाद-परायणा ।
भवाराध्या भव-नुता भव-सागर-तारिणी ॥ १४ ॥
भद्र-काली भद्र-तनुर्भद्र-रूपा च भद्रिका ।
भद्र-रूपा महा-भद्रा सुभद्रा भद्रपालिनी ॥ १५ ॥
सुभव्या भव्य-वदना सुमुखी सिद्ध-सेविता ।

सिद्धिदा सिद्धि-निवहा सिद्धासिद्ध-निषेविता ॥ १६ ॥
शुभदा शुभगा शुद्धा शुद्ध-सत्वा शुभावहा ।
श्रेष्ठा दृष्टि-मयी देवी दृष्टि-संहार-कारिणी ॥ १७ ॥
शर्वाणी सर्वगा सर्वा सर्व-मङ्गल-कारिणी ।
शिवा शान्ता शान्ति-रूपा मृडानी मदनातुरा ॥ १८ ॥
इति ते कथितं देवि स्तोत्रं परम-दुर्लभम् ।
गुह्याद्-गुह्य-तरं गोप्यं गोपनीयं प्रयत्नतः ॥ १९ ॥
किमत्र बहुनोक्तेन त्वदग्रे प्राण-वल्लभे ।
मारणं मोहनं देवि ह्युच्चाटनमतः परम् ॥ २० ॥
स्तम्भनादिक-कर्म्माणि ऋद्धयः सिद्धयोऽपि च ।
त्रिकाल-पठनादस्य सर्वे सिध्यन्त्यसंशयः ॥ २१ ॥

महोत्तमं स्तोत्रमिदं वरानने मयेरितं नित्य मनन्य-बुद्धयः । पठन्ति ये भक्ति-युता नरोत्तमा भवेन्न तेषां रिपुभिः पराजयः ॥ २२ ॥

॥ इति श्री छिन्नमस्ता अष्टोत्तर-शत-नाम-स्तोत्रम् ॥

४—छिन्नमस्ता-क्रम-मन्त्राः

विद्या राज्याभिधादीक्षा छिन्नमस्ता-विधौस्मृता ।
चन्द्र-वह्नि-रसारक्त-श्यामा च षोडशी तथा ॥
परा-षोढा सप्तदशी तदा जाता परा भवेत् ।
दीपिनी मालिनी कुल्ला क्रमाद् विद्यादि राज्यदा ॥

इति छिन्ना-क्रमः (रक्त श्यामा)

१—हूँ

२—हूँ स्वाहा,

३—ह्रीं क्लीं श्रीं ऐं हुँ फट्,

४—वज्र-वैरोचनीये हूँ हूँ फट् स्वाहा श्रीं,

५—श्रीं ह्रीं हूँ ऐं वज्रवैरोचनीये हूँ हूँ फट् स्वाहा ।

छिन्ना-क्रमः

ॐ ऐं ह्रीं विकरालाय स्वाहा (भैरव),

१—श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं हौं,

२—ॐ क्रीं स्त्रीं क्रों,

३—ईं हुँ फट्,

४—श्रीं क्लीं हुँ ऐं वज्र वैरोचनीये हूँ हूँ फट् स्वाहा,

५—श्रीं ह्रीं हूँ ऐं वज्र वैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूँ ऐं फट् स्वाहा,

६—श्रीं ऐं क्लीं सौं श्रीं ह्रीं क्लीं ऐं हौं ॐ श्रीं क्लीं हुँ ऐं वज्रवैरोचनीये हुँ हुँ फट् स्वाहा ।

७—ॐ श्रीं ह्रीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये ह्रीं ह्रीं फट् स्वाहा (१७ अक्षरी) ।

वज्रवैरोचनीये हुँ (कुल्लुका)

श्रीं ह्रीं हुँ (मालिनी)

दीपिनी छिन्ना

ऐं श्रीं क्लीं ह्रीं ऐं वज्रवैरोचनीये हुँ हुँ फट् स्वाहा ऐं स्वाहा ।

परा-छिन्ना

ॐ श्रीं ह्रूँ हूँ ऐं वज्रवैरोचनोये श्रीं हूँ हूँ फट् स्वाहा (१८)।

ॐ श्रीं ह्रीं हूँ ऐं वज्रवैरोचनीये श्रीं ह्रीं हूँ ऐं फट् स्वाहा (१९)।

रेणुका

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं नमो भगवति रक्त पश्चमि रेणुका देवि हन हन पच पच अखिल जगन्मेवशं कुरु कुरु स्वाहा क्लीं ।

शावर-मन्त्रः

ॐ आदेश गुरु को महाचीन देश तहाँ रहे पुष्प भद्रा नदी कूल वेदशास्त्र-पुराण-मूल तहाँ बैठे छिन्न-मस्ता विपरीत-रति-काम-शस्ता ॐ ह्रीं श्रीं हूँ ऐं वज्र वैरोचनी दुःख-सङ्कट-मोचनी डाकिनी-वर्णिनी पैसोर पैसोर कोश-माथे चहुँ ओर सोर कोश छिन्ना राखे भक्त को आप ही देखें मेरी भक्ति गुरु की शक्ति फुरो मन्त्र ईश्वरो वाचा फट् स्वाहा ।

कुचे योनौ शवेऽरण्ये कामिनी वन-मण्डले ।

शय्यायामंगने प्रान्ते वेश्यावासे रतान्तरे ॥
छिन्ना-मनुं जपेद् रात्रौ बाण-साहस्त्रिकं शिवे ।
सर्व-सिद्धीश्वरो भूत्वा छिन्नां पश्यति चक्षुषा ॥

श्रीछिन्नमस्ता हृदय स्तोत्रम्

श्री पार्वत्युवाच—

श्रुतं पूजादिकं सम्यग् भवद्-वक्त्राब्ज-निसृतम् ।
हृदयं छिन्नमस्तायाः श्रोतुमिच्छमि साम्प्रतम् ॥ १ ॥

श्री महादेव उवाच—

नाद्यावधि मया प्रोक्तं कस्यापि प्राण-वल्लभे ।
यत्-त्वया परिपृष्टोऽहं वक्ष्ये प्रीत्यै तव प्रिये ॥ २ ॥

विनियोगः—

ॐ अस्य श्रीछिन्नमस्ता-हृदय-स्तोत्र-मन्त्रस्य भैरव ऋषिः, सम्राट् छन्दः, छिन्नमस्ता देवता, हूं बीजं, ॐ शक्तिः, ह्रीं कीलकं, शत्रु-क्षय-करणार्थे पाठे विनियोगः ।

कर-षडङ्ग-न्यासः—

ॐ	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ हूं	तर्जनीभ्यां स्वाहा	शिरसे स्वाहा
ॐ ह्रीं	मध्यमाभ्यां वषट्	शिखायै वषट्
ॐ क्लीं	अनामिकाभ्यां हुं	कवचाय हुं
ॐ ऐं	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्	नेत्र-त्रयाय वौषट्

ॐ हूं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां फट् अस्त्राय फट्

ध्यानं—

रक्ताभां रक्त-केशीं कर-कमल-लसत्-कर्तृकां काल-कांतिं।
विच्छिन्नात्मीय-मुण्डासृगरुण-बहुलादग्र-धारां पिबन्तीम् ॥
विद्याभौघ-प्रचण्ड-श्वसन-सम-निभां सेवितां सिद्ध-सङ्घैः।
पद्माक्षीं छिन्नमस्तां छल-कर-दितिजच्छेदिनीं संस्मरामि ॥

हृदय-स्तोत्र—

वन्देऽहं छिन्नमस्तां तां छिन्न-मुण्ड-धरां पराम्।
छिन्न-ग्रीवोच्छटाच्छन्नां क्षौम-वस्त्र-परिच्छदाम् ॥ १ ॥
सर्वदा सुर-सङ्घैन सेवितांघ्रि-सरोरुहाम्।
सेवे सकल-सम्पत्यै छिन्नमस्तां शुभ-प्रदाम् ॥ २ ॥
यज्ञानां योग-यज्ञाय या तु जाता युगे युगे।
दानवान्तकरी देवी छिन्नमस्तां भजामि ताम् ॥ ३ ॥
वैरोचनीं वरारोहां वामदेव-विवर्द्धिताम्।
कोटि-सूर्य-प्रभां वन्दे विद्युद्वर्णाक्षि-मण्डिताम् ॥ ४ ॥

निज-कण्ठोच्छलद्रक्त-धारया या मुहुर्मुहुः।
योगिनीस्तर्पयन्त्युग्रा तस्याश्चरणमाश्रये ॥ ५ ॥
हुमित्येकाक्षरं मन्त्रं यदीयं युक्त-मानसः।
यो जपेत् तस्य विद्वेषी भस्मतां याति तां भजे ॥ ६ ॥
हूं स्वाहेति मनु सम्यग् यः स्मरत्यार्ति-मान् नरः।
छिनत्ति छिन्नमस्ता या तस्य बाधां नमामि ताम् ॥ ७ ॥

यस्याः कटाक्ष-मात्रेण क्रूर-भूतादयो द्रुतम् ।
दूरतः सम्पलायन्ते छिन्नमस्तां भजामि ताम् ॥ ८ ॥

क्षिति-तल-परिरक्षा क्षान्त-रोषा सुदक्षा,
छल-युत-खल-कक्षा छेदने क्षान्ति-लक्ष्या ।
क्षिति-दितिज-सुपक्षा क्षोणिपाक्षय-शिक्षा,
जयतु जयतु चाक्षा छिन्नमस्तारि-भक्षा ॥ ९ ॥

कलि-कलुष-कलानां कर्तने कर्तृ-हस्ता,
सुर-कुवलय-काशा मन्द-भानु-प्रकाशा ।
असुर-कुल-कला-पत्रासिका काल-मूर्ति—
र्जयतु जयतु काली छिन्नमस्ता करालो ॥ १० ॥

भुवन-भरण-भूरि-भ्राजमानानुभावा,
भव-भव-विभवानां भारणोद्भात-भूतिः ।
द्विज-कुल-कमलानां भासिनी भानु-मूर्ति—
र्भवतु भवतु वाणी छिन्नमस्ता भवानी ॥ ११ ॥

मम रिपु-गणमाशुच्छेत्तुमुग्रं कृपाणं,
सपदि जननि तीक्ष्णं छिन्न-मुण्डं गृहाण ।
भवतु तव यशोलं छिन्धि शत्रून् खलान् मे,
मम च परिदिशेष्टं छिन्नमस्ते क्षमस्व ॥ १२ ॥

छिन्न-ग्रीवा छिन्न-मस्ता छिन्न-मुण्ड-धराक्षता ।
क्षोद-क्षेम-करी स्वक्षा क्षोणीक्षाच्छादन-क्षमा ॥ १३ ॥

वैरोचनी वरारोहा बलि-दान-प्रहर्षिता ।

बलि-पूजित-पादाब्जा वासुदेव-प्रपूजिता ॥ १५ ॥
इति द्वादश-नामानि छिन्नमस्ता-प्रियाणि यः ।
स्मरेत् प्रातः समुत्थाय तस्य नश्यन्ति शत्रवः ॥ १६ ॥
यां स्मृत्वा सन्ति सद्यः सकलसुरगणाः सर्वदा सम्पदाढ्याः,
शत्रूणां सङ्घमाहत्य विशद-वदनाः स्वस्थ-चित्ताःश्रयन्ति ।
तस्याः सङ्कल्पवन्तः सरसिज-चरणं सन्ततं संश्रयन्ति,
साद्या श्रीशादिसेव्या सुफलतु सुतरां छिन्नमस्ता प्रशस्ता ॥
हृदयमिदमज्ञात्वा हन्तुमिच्छति यो द्विषम् ।
कथं तस्याचिरं शत्रुर्नाशमेष्यति पार्वति ॥ १७ ॥
यदीच्छेन्नाशनं शत्रोः शीघ्रमेतत् पठेन्नरः ।
छिन्नमस्ता प्रसन्ना हि ददाति फलमीप्सितम् ॥ १८ ॥
शत्रु-प्रशमनं पुण्यं समीप्सित-फल-प्रदम् ।
आयुरारोग्यदं चैव पठतां पुण्य-साधनम् ॥ १९ ॥

इति श्रीनन्द्यावर्ते महादेव-पार्वती-सम्वादे श्रीछिन्नमस्ता-हृदय-स्तोत्रं

श्री छिन्नमस्ता-सहस्रनाम

श्री देव्युवाच—

देव-देव महादेव सर्व-शास्त्र-विदां वर ।
कृपां कुरु जगन्नाथ कथयस्व मम प्रभो ॥
प्रचण्ड-चण्डिका देवी सर्व-लोक-हितैषिणी ।
तस्याश्च कथितं सर्वं स्तवं च कवचादिकम् ॥
इदानीं छिन्नमस्ताया नाम्नां साहस्रकं शुभम् ।
मे प्रकाशय देवेश कृपया भक्त-वत्सल ॥

श्री शिव उवाच—

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि छिन्नायाः सुमनोहरम् ।
गोपनीयं प्रयत्नेन यदीच्छेदात्मनो हितम् ।।
न वक्तव्यं च कुत्रापि प्राणैः कण्ठ-गतैरपि ।
तच्छृणुष्व महेशानि सर्वं तत् कथयामि ते ।।
विना पूजां विना ध्यानं विना जाप्येन सिद्धयति ।
विना ध्यानं तथा देवि विना भूतादि-शोधनम् ।।
पठनादेव सिद्धिः स्यात् सत्यं सत्यं वरानने ।
पुरा कैलास-शिखरे सर्व-देव-सभालये ।।
परिपप्रच्छ कथितं यथा शृणु वरानने ।

ॐ अस्य श्री प्रचण्ड-चण्डिका सहस्रनाम-स्तोत्रस्य भैरव ऋषिः, सम्राट् छन्दः, प्रचण्ड-चण्डिका देवता, धर्मार्थ-काम-मोक्षार्थे पाठे विनियोगः ।

ॐ प्रचण्ड-चण्डिका चण्डा चण्ड-देव्यविनाशिनी ।
चामुण्डा च सुचण्डा च चपला चारु-देहिनी ।।
ललज्जिह्वा चलद्रक्ता चारु-चन्द्र-निभानना ।
चकोराक्षी चण्ड-नादा चञ्चला च मनोन्मदा ।।
चेतना चिति-संस्था च चित्कला ज्ञान-रूपिणी ।
महा-भयङ्करी देवी वरदाभय-धारिणी ।।
भवाढ्या भव-रूपा च भव-बन्ध-विमोचिनी ।
भवानी भुवनेशी च भव-संसार-तारिणी ।।

भवाब्धिर्भव-मोक्षा च भव-बन्ध-विघातिनी ।
भागीरथी भगस्था च भाग्य-भोग्य-प्रदायिनी ।।
कमला कामदा दुर्गा दुर्ग-बन्ध-विमोचिनी ।
दुर्दर्शना दुर्ग-रूपा दुर्ज्ञेया दुर्ग-नाशिनी ।।
दीन-दुःख-हरा नित्यानित्य-शोक-विनाशिनी ।
नित्यानन्द-मयी देवी नित्यं कल्याण-कारिणी ।।
सर्वार्थ-साधन-करी सर्व-सिद्धि-स्वरूपिणी ।
सर्व-क्षोभण-शक्तिश्च सर्व-विद्राविणी परा ।।
सर्व-रञ्जन-शक्तिश्च सर्वोन्माद-स्वरूपिणी ।
सर्वज्ञा सिद्ध-दात्री च सिद्ध-विद्या-स्वरूपिणी ।।
सकला निष्कला सिद्धा कलातीता कला-मयी ।
कुलज्ञा कुल-रूपा च चक्षुरानन्द-दायिनी ।।
कुलीना साम-रूपा च काम-रूपा मनोहरा ।
कमलस्था कञ्ज-मुखी कुञ्जरेश्वर-गामिनी ।।
कुल-रूपा कोटराक्षी कमलैश्वर्य-दायिनी ।
कुन्ती ककुब्मिनी कुल्ला कुरुकुल्ला करालिका ।।
कामेश्वरी काम-माता काम-ताप-विमोचिनी ।
काम-रूपा काम-सत्वा काम-कौतुक-कारिणी ।।
कारुण्य-हृदया क्रीं-क्रीं मन्त्र-रूपा च कोटरा ।
कौमोदकी कुमुदिनी कैवल्या कुल-वासिनी ।।
केशवी केशवाराध्या केशी-दैत्य-निषूदिनी ।
क्लेशहा क्लेश-रहिता क्लेश-सङ्घ-विनाशिनी ।।

कराली च करालास्या करालासुर-नाशिनी ।
कराल-चर्मासि-धरा कराल-कुल-नाशिनी ॥
कङ्किनी कङ्क-निरता कपाल-वर-धारिणी ।
खड्ग-हस्ता त्रिनेत्रा च खण्ड-मुण्डासि-धारिणी ॥
खलहा खल-हन्त्री च क्षरन्ती खगता सदा ।
गङ्गा गौतम-पूज्या च गौरी गन्धर्व-वासिनी ॥
गन्धर्वा गगणाराध्या गणा गन्धर्व-सेविता ।
गणत्कार-गणा देवी निर्गुणा च गुणात्मिका ॥
गुणता गुण-दात्री च गुण-गौरव-दायिनी ।
गणेश-माता गम्भीरा गगणा ज्योति-कारिणी ॥
गौराङ्गी च गया गम्या गौतम-स्थान-वासिनी ।
गदाधर-प्रिया ज्ञेया ज्ञान-गम्या गुहेश्वरी ॥
गायत्री च गुणवती गुणातीता गुणेश्वरी ।
गणेश-जननी देवी गणेश-वर-दायिनी ॥
गणाध्यक्ष-नुता नित्या गणाध्यक्ष-प्रपूजिता ।
गिरीश-रमणी देवी गिरीश-परिवन्दिता ॥
गतिदा गतिहा गीता गौतमी गुरु-सेविता ।
गुरु-पूज्या गुरु-युता गुरु-सेवन-तत्परा ॥
गन्धद्वारा च गन्धाढ्या गन्धात्मा गन्ध-कारिणी ।
गीर्वाण-पति-सम्पूज्या गीर्वाण-पति-तुष्टिदा ॥
गीर्वाणाधीश-रमणी गीर्वाणाधीश-वन्दिता ।
गीर्वाणाधीश-संसेव्या गीर्वाणाधीश-हर्षदा ॥

गानशक्तिर्गान-गम्या गान-शक्ति-प्रदायिनी ।
गान-विद्या गान-सिद्धा गान-सन्तुष्ट-मानसा ॥
गानातीता गान-गीता गान-हर्ष-प्रपूरिता ।
गन्धर्व-पति-संहृष्टा गन्धर्व-गुण-मण्डिता ॥
गन्धर्व-गण-संसेव्या गन्धर्व-गण-मध्यगा ।
गन्धर्व-गण-कुशला गन्धर्व-गण-पूजिता ॥
गन्धर्व-गण-निरता गन्धर्व-गण-भूषिता ॥
घर्घरा घोर-रूपा च घोर-घुर्घुर-नादिनी ।
घर्म-विन्दु-समुद्भूता घर्म-विन्दु-स्वरूपिणी ॥
घण्टा-रवा घन-रवा घन-रूपा घनोदरी ।
घोर-सत्वा च घनदा घण्टा-नाद-विनोदिनी ॥
घोर-चाण्डालिनी घोरा घोर-चण्ड-विनाशिनी ।
घोर-दानव-दमनी घोर-दानव-नाशिनी ॥
घोर-कर्मादि-रहिता घोर-कर्म-निषेविता ।
घोर-तत्त्व-मयी देवी घोर-तत्त्व-विमोचिनी ॥
घोर-कर्मादि-रहिता घोर-कर्मादि-पूरिता ।
घोर-कर्मादि-निरता घोर-कर्म-प्रवर्द्धिनी ॥
घोर-भूत-प्रमथिनी घोर-वेताल-नाशिनी ।
घोर-दावाग्नि-दमनी घोर-शत्रु-निषूदिनी ॥
घोर-मन्त्र-युता चैव घोर-मन्त्र-प्रपूजिता ।
घोर-मन्त्र-मनोभिज्ञा घोर-मन्त्र-फल-प्रदा ॥

घोर-मन्त्र-निधिश्चैव घोर-मन्त्र-कृतास्पदा ।
घोर-मन्त्रेश्वरी देवी घोर-मन्त्रार्थ-मानसा ॥
घोर-मन्त्रार्थ-तत्त्वज्ञा घोर-मन्त्रार्थ-पारगा ।
घोर-मन्त्रार्थ-विभवा घोर-मन्त्रार्थ-बोधिनी ॥
घोर-मन्त्रार्थ-निचया घोर-मन्त्रार्थ-जन्मभूः ।
घोर-मन्त्र-जप-रता घोर-मन्त्र-जपोद्यता ॥
ङकार-वर्ण-निलया ङकाराक्षर-मण्डिता ।
ङकारा पर-रूपा च ङकाराक्षर-रूपिणी ॥
चित्र-रूपा चित्र-नाडी चारु-केशी चय-प्रभा ।
चञ्चला चञ्चलाकारा चारु-रूपा च चण्डिका ॥
चतुर्वेद-मयी चण्डा चाण्डाल-गण-मण्डिता ।
चाण्डाल-छेदिनी चण्ड-ताप-निर्मूल-कारिणी ॥
चतुर्भुजा चण्ड-रूपा चण्ड-मुण्ड-विनाशिनी ।
चन्द्रिका चन्द्र-कीर्तिश्च चन्द्र-कान्तिस्तथैव च ॥
चन्द्रास्या चन्द्र-रूपा च चन्द्र-मौलि-स्वरूपिणी ।
चन्द्र-मौलि-प्रिया चन्द्र-मौलि-सन्तुष्ट-मानसा ॥
चकोर-बन्धु-रमणी चकोर-बन्धु-पूजिता ।
चक्र-रूपा चक्र-मयी चक्राकार-स्वरूपिणी ॥
चक्र-पाणि-प्रिया चक्र-पाणि-प्रीति-प्रदायिनी ।
चक्र-पाणि-रसाभिज्ञा चक्र-पाणि-वर-प्रदा ॥
चक्र-पाणि-वरोन्मत्ता चक्र-पाणि-स्वरूपिणी ।
चक्र-पाणीश्वरी नित्यं चक्र-पाणि-नमस्कृता ॥

चक्र-पाणि-समुद्भूता चक्र-पाणि-गुणास्पदा ।
चन्द्रावली चन्द्रवती चन्द्र-कोटि-सम-प्रभा ॥
चन्दनार्चित-पादाब्जा चन्दनान्वित-मस्तका ।
चारु-कीर्तिश्चारु-नेत्रा चारु-चन्द्र-विभूषणा ॥
चारु-भूषा चारु-वेषा चारु-वेष-प्रदायिनी ।
चारु-भूषा-भूषिताङ्गी चतुर्वक्त्र-वर-प्रदा ॥
चतुर्वक्त्र-समाराध्या चतुर्वक्त्र-समाश्रिता ।
चतुर्वक्त्रा चतुर्बाहा चतुर्थी च चतुर्दशी ॥
चित्रा चर्मण्वती चैत्री चन्द्र-भागा च चम्पका ।
चतुर्दश-यमाकारा चतुर्दश-यमानुगा ॥
चतुर्दश-यम-प्रीता चतुर्दश-यम-प्रिया ।
छलस्था छिद्र-रूपा च छद्मदा छद्म-राजिका ॥
छिन्नमस्ता तथा छिन्ना छिन्न-मुण्ड-विधारिणी ।
जयदा जय-रूपा च जयन्ती जय-मोहिनी ॥
जया जीवन-संस्था च जालन्धर-निवासिनी ।
ज्वालामुखी ज्वाल-दात्री जाज्वल्य-दहनोपमा ॥
जगद्वन्द्या जगत्पूज्या जगत्त्राण-परायणा ।
जगती जगदाधारा जन्म-मृत्यु-जरापहा ॥
जननी जन्म-भूमिश्च जन्मदा जय-शालिनी ।
ज्वर-रोग-हरा ज्वाला ज्वाला-माला-प्रपूरिता ॥
जम्भारातीश्वरी जम्भारति-वैभव-कारिणी ।
जम्भारति-स्तुता जम्भारति-शत्रु-निषूदिनी ॥

जयदुर्गा जयाराध्या जयकाली जयेश्वरी ।
जयतारा जयातीता जय-शङ्कर-वल्लभा ॥
जयदा जह्नु-तनया जलधि-त्रास-कारिणी ।
जलधि-व्याधि-दमनी जलधि-ज्वर-नाशिनी ॥
जङ्घमेशी जाड्य-हरा जाड्य-सङ्घ-निवारिणी ।
जाड्य-ग्रस्त-जनातीता जाड्य-रोग-निवारिणी ॥
जन्म-दात्री जन्म-हर्त्री जय-घोष-समन्विता ।
जप-योग-समायुक्ता जप-योग-विनोदिनी ॥
जप-योग-प्रिया जाप्या जपातीता जय-स्वना ।
जाया-भाव-स्थिता जाया जाया-भाव-प्रपूरिणी ॥
जपा-कुसुम-सङ्काशा जपा-कुसुम-पूजिता ।
जपा-कुसुम-सम्प्रीता जपा-कुसुम-मण्डिता ॥
जपा-कुसुम-वद्भासा जपा-कुसुम-रूपिणी ।
जमदग्नि-स्वरूपा च जानकी जनकात्मजा ॥
झञ्झावात-प्रमुक्ताङ्गी झोर-झङ्कार-वासिनी ।
झङ्कार-कारिणी झञ्झावात-रूपा च झङ्करी ॥
ञकाराणु-स्वरूपा च टनटङ्कार-नादिनी ।
टङ्कारी टकुवाणी च ठकाराक्षर-रूपिणी ॥
डिण्डिमा च तथा डिम्भा डिण्डु-डिण्डिम-नादिनी ।
ढक्का-मयी ढिल-मयी नृत्य-शब्दा विलासिनी ॥
ढक्का ढक्केश्वरी ढक्का-शब्द-रूपा तथैव च ।
ढक्का-नाद-प्रिया ढक्का-नाद-सन्तुष्ट-मानसा ॥

णकारा णाक्षर-मयी णाक्षरादि-स्वरूपिणी ।
त्रिपुरा त्रिपुर-मयी त्रिशक्तिस्त्रिगुणात्मिका ॥
तामसी च त्रिलोकेशी त्रिपुरा च त्रयीश्वरी ।
त्रिविद्या च त्रिरूपा च त्रिनेत्रा च त्रिरूपिणी ॥
तारिणी तरला तारा तारकारि-प्रपूजिता ।
तारकारि-समाराध्या तारकारि-वर-प्रदा ॥
तारकारि-प्रसूस्तन्वी तरुणी तरल-प्रभा ।
त्रिरूपा च त्रिपुर-गा त्रिशूल-वर-धारिणी ॥
त्रिशूलिनी तन्त्र-मयी तन्त्र-शास्त्र-विशारदा ।
तन्त्र-रूपा तपोमूर्तिस्तन्त्र-मन्त्र-स्वरूपिणी ॥
तडित्तडिल्लताकारा तत्त्व-ज्ञान-प्रदायिनी ।
तत्त्व-ज्ञानेश्वरी देवी तत्त्व-ज्ञान-प्रमोदिनी ॥
त्रयी-मयी त्रयी-सेव्या त्र्यक्षरी त्र्यक्षरेश्वरी ।
ताप-विध्वंसिनी ताप-सङ्घ-निर्मूल-कारिणी ॥
त्रास-कर्त्री त्रास-हर्त्री त्रास-दात्री च त्रासहा ।
तिथीशा तिथि-रूपा च तिथिस्था तिथि-पूजिता ॥
तिलोत्तमा च तिलदा तिल-प्रीता तिलेश्वरी ।
त्रिगुणा त्रिगुणाकारा त्रिपुरी त्रिपुरात्मिका ॥
त्रिकुटा त्रिकुटाकारा त्रिकुटाचल-मध्यगा ।
त्रिजटा च त्रिनेत्रा च त्रिनेत्र-वर-सुन्दरी ॥
तृतीया च त्रिवर्षा च त्रिविधा त्रिमतेश्वरी ।
त्रिकोणस्था त्रिकोणेशी त्रिकोण-यन्त्र-मध्यगा ॥

त्रिसन्ध्या च त्रिसन्ध्यार्च्या त्रिपदा त्रिपदास्पदा ।
स्थान-स्थिता स्थलस्था च धन्य-स्थल-निवासिनी ॥
थकाराक्षर-रूपा च स्थूल-रूपा तथैव च ।
स्थूल-हस्ता तथा स्थूला स्थैर्य-रूप-प्रकाशिनी ॥
दुर्गा दुर्गार्ति-हन्त्री च दुर्ग-बन्ध-विमोचिनी ।
देवी-दानव-संहन्त्री दनुजेश-निषूदिनी ॥
दारापत्य-प्रदा नित्या शङ्कराद्धाङ्ग-धारिणी ।
दिव्याङ्गी देव-माता च देव-दुष्ट-विनाशिनी ॥
दीन-दुःख-हरा दीन-ताप-निर्मूल-कारिणी ।
दीन-माता दीन-सेव्या दीन-दम्भ-विनाशिनी ॥
दनुज-ध्वंसिनी देवी देवकी देव-वल्लभा ।
दानवारि-प्रिया दीर्घा दानवारि-प्रपूजिता ॥
दीर्घ-स्वरा दीर्घ-तनुर्दीर्घ-दुर्गति-नाशिनी ।
दीर्घ-नेत्रा दीर्घ-चक्षुर्दीर्घ-केशी दिगम्बरी ॥
दिगम्बर-प्रिया दान्ता दिगम्बर-स्वरूपिणी ।
दुःख-हीना दुःख-हरा दुःख-सागर-तारिणी ॥
दुःख-दारिद्र्य-शमनी दुःख-दारिद्र्य-कारिणी ।
दुःखदा दुस्सहा दुष्ट-खण्डनैक-स्वरूपिणी ॥
देव-वामा देव-सेव्या देव-शक्ति-प्रदायिनी ।
दामिनी दामिनी-प्रीता दामिनी-शत-सुन्दरी ॥
दामिनी-शत-संसेव्या दामिनी-दाम-भूषिता ।
देवता-भाव-सन्तुष्टा देवता-शत-मध्यगा ॥

दयार्द्रा च दया-रूपा दया-दान-परायणा ।
दया-शीला दया-सारा दया-सागर-संस्थिता ॥
दश-विद्यात्मिका देवी दश-विद्या-स्वरूपिणी ।
धरणी धनदा धात्री धन्या धन्य-परा शिवा ॥
धर्म-रूपा धनिष्ठा च धेया च धीर-गोचरा ।
धर्म-राजेश्वरी धर्म-कर्म-रूपा धनेश्वरी ॥
धनुर्विद्या धनुर्गम्या धनुर्धर-वर-प्रदा ।
धर्म-शीला धर्म-लीला धर्म-कर्म-विवर्जिता ॥
धर्मदा धर्म-निरता धर्म-पाखण्ड-खण्डिनी ।
धर्मेशी धर्म-रूपा च धर्मराज-वर-प्रदा ॥
धर्मिणी धर्म-गेहस्था धर्माधर्म-स्वरूपिणी ।
धनदा धनद-प्रीता धन-धान्य-समृद्धिदा ॥
धन-धान्य-समृद्धिस्था धन-धान्य-विनाशिनी ।
धर्म-निष्ठा धर्म-धीरा धर्म-मार्ग-रता सदा ॥
धर्म-बीज-कृत-स्थाना धर्म-बीज-सुरक्षिणी ।
धर्म-बीजेश्वरी धर्म-बीज-रूपा च धर्मगा ॥
धर्म-बीज-समुद्भूता धर्म-बीज-समाश्रिता ।
धराधर - पति - प्राणा धरा - धर-पति-स्तुता ॥
धरा-धरेन्द्र-तनुजा धरा-धरेन्द्र-वन्दिता ।
धरा-धरेन्द्र-गेहस्था धरा-धरेन्द्र-पालिनी ॥
धरा-धरेन्द्र-सर्वार्ति-नाशिनी धर्म-पालिनी ।
नवीना निर्मला नित्या नागराज-प्रपूजिता ॥

नागेश्वरी नाग-माता नाग-कन्या च नग्निका ।
निर्लेपा निर्विकल्पा च निर्लोमा निरुपद्रवा ।।
निराहारा निराकारा निरञ्जन-स्वरूपिणी ।
नागिनी नाग-विभवा नाग-राज-परिस्तुता ।।
नाग-राज-गुणज्ञा च नाग-राज-सुख-प्रदा ।
नाग-लोक-गता नित्यं नाग-लोक-निवासिनी ।।
नाग-लोकेश्वरी नाग-भागिनी नाग-पूजिता ।
नाग-मध्य-स्थिता नाग-मोह-संक्षोभ-दायिनी ।।
नृत्य-प्रिया नृत्य-वती नृत्य-गीत-परायणा ।
नृत्येश्वरी नर्तकी च नृत्य-रूपा निराश्रया ।।
नारायणी नरेन्द्रस्था नर-मुण्डास्थि-मालिनी ।
नर-मांस-प्रिया नित्या नर-रक्त-प्रिया सदा ।।
नर-राजेश्वरी नारी-रूपा नारी-स्वरूपिणी ।
नारी-गणार्चिता नारी-मध्यगा नूतनाम्बरा ।।
नर्मदा च नदी-रूपा नदी-सङ्गम-संस्थिता ।
नर्मदेश्वर-सम्प्रोता नर्मदेश्वर-रूपिणी ।।
पद्मावती पद्म-मुखी पद्म-किञ्जल्क-वासिनी ।
पट्ट-वस्त्र-परीधाना पद्म-राग-विभूषिता ।।
परमा प्रीतिदा नित्यं प्रेतासन-निवासिनी ।
परिपूर्ण-रसोन्मत्ता प्रेम-विह्वल-वल्लभा ।।
पवित्रासव-निष्पूता प्रेयसी परमात्मिका ।
प्रिय-व्रत-परा नित्यं परम-प्रेम-दायिनी ।।

पुष्प-प्रिया पद्म-कोशा पद्म-धर्म-निवासिनी ।
फेत्कारिणी-तन्त्र-रूपा फेरु-फेरव-नादिनी ।।
वंशिनी वंश-रूपा च बगला वाम-रूपिणी ।
वाङ्मयी वसुधा धृष्या वाग्भवाख्या वरा नरा ।।
बुद्धिदा बुद्धि-रूपा च विद्या वाद-स्वरूपिणी ।
बाला वृद्ध-मयी-रूपा वाणी वाक्य-निवासिनी ।।
वरुणा वाग्वती वीरा वीर-भूषण-भूषिता ।
वीर-भद्रार्चित-पदा वीर-भद्र-प्रसूरपि ।।
वेद-मार्ग-रता वेद-मन्त्र-रूपा वषट्-प्रिया ।
वीणा-वाद्य-समायुक्ता वीणा-वाद्य-परायणा ।।
वीणा-रवा तथा वीणा-शब्द-रूपा च वैष्णवी ।
वैष्णवाचार-निरता वैष्णवाचार-तत्परा ।।
विष्णु-सेव्या विष्णु-पत्नी विष्णु-रूपा वरानना ।
विश्वेश्वरी विश्व-माता विश्व-निर्माण-कारिणी ।।
विश्व-रूपा च विश्वेशी विश्व-संहार-कारिणी ।
भैरवी भैरवाराध्या भूत-भैरव-सेविता ।।
भैरवेशी तथा भीमा भैरवेश्वर-तुष्टिदा ।
भैरवाधीश-रमणी भैरवाधीश-पालिनी ।।
भीमेश्वरी भीम-माता भीम-शब्द-परायणा ।
भीम-रूपा च भीमेशी भीमा भीम-वर-प्रदा ।।
भीम-पूजित-पादाब्जा भीम-भैरव-पालिनी ।
भीमासुर-ध्वंस-करी भीम-दुष्ट-विनाशिनी ।।

भुवना भुवनाराध्या भवानी भूतिदा सदा ।
भयदा भय-हन्त्री च अभयाऽभय-रूपिणी ॥
भीम-नादा विह्वला च भय-भीति-विनाशिनी ।
मत्ता प्रमत्त-रूपा च मदोन्मत्त-स्वरूपिणी ॥
मान्या मनोज्ञा माना च मङ्गला च मनोहरा ।
माननीया महा-पूज्या महा-महिष-मर्दिनी ॥
महिषासुर-हन्त्री च मातङ्गी मय-वासिनी ।
माध्वी मधु-मयी मुद्रा मुद्रिका मन्त्र-रूपिणी ॥
महा-विश्वेश्वरी-दूती मौलि-चन्द्र-प्रकाशिनी ।
यशः-स्वरूपिणी-देवी योग-मार्ग-प्रदायिनी ॥
योगिनी योग-गम्या च याम्येशी योग-रूपिणी ।
यज्ञाङ्गी च योग-मयी जप-रूपा जपात्मिका ॥
युगाख्या च युगान्ता च योनि-मण्डल-वासिनी ।
अयोनिजा योग-निद्रा योगानन्द-प्रदायिनी ॥
रमा रति-प्रिया नित्यं रति-राग-विवर्द्धिनी ।
रमणी रास-सम्भूता रम्या रास-प्रिया रसा ॥
रणोत्कण्ठा रणस्था च वरा रङ्ग-प्रदायिनी ।
रेवती रण-जैत्री च रसोद्भूता रणोत्सवा ॥
लता लावण्य-रूपा च लवणाब्धि-स्वरूपिणी ।
लवङ्ग-कुसुमाराध्या लोल-जिह्वा च लेलिहा ॥
वशिनी वन-संस्था च वन-पुष्प-प्रिया वरा ।
प्राणेश्वरी बुद्धि-रूपा बुद्धि-दात्री बुधात्मिका ॥

शमनी श्वेत-वर्णा च शाङ्करी शिव-भाषिणी ।
शाम्य-रूपा शक्ति-रूपा शक्ति-विन्दु-निवासिनी ॥
सर्वेश्वरी सर्व-दात्री सर्व-माता च शर्वरी ।
शाम्भवी सिद्धिदा सिद्धा सुषुम्ना स्वर-भासिनी ॥
सहस्र-दल-मध्यस्था सहस्र-दल-वर्तिनी ।
हर-प्रिया हर-ध्येया हूङ्कार-बीज-रूपिणी ॥
लङ्केश्वरी च तरला लोम-मांस-प्रपूजिता ।
क्षेम्या क्षेमकरी क्षामा क्षीर-विन्दु-स्वरूपिणी ॥
क्षिप्त-चित्त-प्रदा नित्यं क्षौम-वस्त्र-विलासिनी ।
छिन्ना च छिन्न-रूपा च क्षुधा क्षौत्कार-रूपिणी ॥
सर्व-वर्ण-मयी देवी सर्व-सम्पत्प्रदायिनी ।
सर्व-सम्पत्प्रदात्री च सम्पदापद्-विभूषिता ॥
सत्व-रूपा च सर्वार्था सर्व-देव-प्रपूजिता ।
सर्वेश्वरी सर्व-माता सर्वज्ञा सुरसात्मिका ॥
सिन्धुर्मन्दाकिनी गङ्गा-नदी सागर-रूपिणी ।
सुकेशी मुक्त-केशी च डाकिनी वर-वर्णिनी ॥
ज्ञानदा ज्ञान-गगना सोम-मण्डल-वासिनी ।
आकाश-निलया नित्या परमाकाश-रूपिणी ॥
अन्नपूर्णा महानित्या महादेव-रसोद्भवा ।
मङ्गला कालिका चण्डा चण्ड-नादाति-भीषणा ॥
चण्डासुरस्य मथिनी चामुण्डा चपलात्मिका ।
चण्डी चामर-केशी च चलत्कुण्डल-धारिणी ॥

मुण्ड-माला-धरा नित्या खण्ड-मुण्ड-विलासिनी ।
खड्ग-हस्ता मुण्ड-हस्ता वर-हस्ता वर-प्रदा ॥
असि-चर्म-धरा नित्या पाशांकुश-धरा परा ।
शूल-हस्ता शिव-हस्ता घण्टा-नाद-विलासिनी ॥
धनुर्बाण-धरादित्या नाग-हस्ता नगात्मजा ।
महिषासुर-हन्त्री च रक्त-बीज-विनाशिनी ॥
रक्त-रूपा रक्त-गात्रा रक्त-हस्ता भय-प्रदा ।
असिता च धर्म-धरा पाशांकुश-धरा परा ॥
धनुर्बाण-धरा नित्या धूम्र-लोचन-नाशिनी ।
परस्था देवता-मूर्तिः शर्वाणी शारदा परा ॥
नाना-वर्ण-विभूषाङ्गी नाना-राग-समापिनी ।
पशु-वस्त्र-परीधाना पुष्पायुध-धरा परा ॥
मुक्त-रञ्जित-मालाढ्या मुक्ता-हार-विलासिनी ।
स्वर्ण-कुण्डल-भूषा च स्वर्ण-सिंहासन-स्थिता ॥
सुन्दराङ्गी सुवर्णाभा शाम्भवी शकटात्मिका ।
सर्व-लोकेश-विद्या च मोह-सम्मोह-कारिणी ॥
श्रेयसी सृष्टि-रूपा च छिन्नच्छद्म-मयी च्छला ।
छिन्न-मुण्ड-धरा नित्या नित्यानन्द-विधायिनी ॥
नन्दा पूर्णा च रिक्ता च तिथयः पूर्ण-षोडशी ।
कुहूः संक्रान्ति-रूपा च पञ्च-पर्व-विलासिनी ॥
पञ्च-बाण-धरा नित्या पञ्चम-प्रीतिदा परा ।
पञ्च-पत्राभिलाषा च पञ्चामृत-विलासिनी ॥

पञ्चाली पञ्चमी देवी पञ्च-रक्त-प्रसारिणी ।
पञ्च-बाण-धरा नित्या नित्य-दात्री दया-परा ।।
पललादि-प्रिया नित्याऽपशु-गम्या परेशिता ।
परा पर-रहस्या च परम-प्रेम-विह्वला ।।
कुलीना केशि-मार्गस्था कुल-मार्ग-प्रकाशिनी ।
कुलाकुल-स्वरूपा च कुलार्णव-मयी कुला ।।
रुक्मा च काल-रूपा च काल-कम्पन-कारिणी ।
विलास-रूपिणी भद्रा कुलाकुल-नमस्कृता ।।
कुबेर-वित्त-धात्री च कुमार-जननी परा ।
कुमारी-रूप-संस्था च कुमारी-पूजनाम्बिका ।।
कुरङ्ग-नयना देवी दिनेशास्यापराजिता ।
कुण्डली कदली-सेना कुमार्ग-रहिता वरा ।।
अनन्त-रूपानन्तस्था आनन्द-सिन्धु-वासिनी ।
इला-स्वरूपिणी देवी ईई-भेद-भयङ्करी ।।
इडा च पिङ्गला नाडी इकाराक्षर-रूपिणी ।
उमा चोत्पत्ति-रूपा च उच्च-भाव-विनाशिनी ।।
ऋग्वेदा च निराराध्या यजुर्वेद-प्रपूजिता ।
साम-वेदेन सङ्गीता अथर्व-वेद-भाषिणी ।।
ऋकार-रूपिणी ऋक्षा निरक्षर-स्वरूपिणी ।
अहि-दुर्गा-समाचारा इकारार्ण-स्वरूपिणी ।।
ओङ्कारा प्रणवस्था च ओङ्कारादि-स्वरूपिणी ।
अनुलोम-विलोमस्था थकार-वर्ण-सम्भवा ।।

पञ्चाशद्-वर्ण-बीजाढ्या पञ्चाशन्मुण्ड-मालिका ।
प्रत्येका दश-संख्या च षोडशी छिन्नमस्तका ॥
षडङ्ग-युवती-पूज्या षडङ्ग-रूप-वर्जिता ।
षड्-वक्त्र-संश्रिता नित्या विश्वेशी षड्गदालया ॥
माला-मन्त्र-मयी मन्त्र-जप-माता मदालसा ।
सर्व-विश्वेश्वरी शक्तिः सर्वानन्द-प्रदायिनी ॥
इति श्रीछिन्नमस्ताया नाम-साहस्रमुत्तमम् ।
पूजा-क्रमेण कथितं साधकानां सुखावहम् ॥
गोपनीयं गोपनीयं गोपनीयं न संशयः ।
अर्द्ध-रात्रे मुक्त-केशो भक्ति-युक्तो भवेन्नरः ॥
जपित्वा पूजयित्वा च पठेन्नाम-सहस्रकम् ।
विद्या-सिद्धिर्भवेत्तस्य षण्मासाभ्यास-योगतः ॥
येन केन प्रकारेण देवी-भक्ति-परो भवेत् ।
अखिलान् स्तम्भयेल्लोकान् राज्ञोऽपि मोहयेत सदा ॥
आकर्षयेद् देव-शक्तिं मारयेद् देवि विद्विषम् ।
शत्रवो दासतां यान्ति यान्ति पापानि संक्षयम् ॥
मृत्युश्च क्षयतां याति पठनाद् भाषणात् प्रिये ।
प्रशस्तायाः प्रसादेन किं न सिद्धयति भू-तले ॥
इदं रहस्यं परमं परं स्वस्त्ययनं महत् ।
धृत्वा बाहौ महा-सिद्धिः प्राप्यते नात्र संशयः ॥
अनया सदृशी विद्या विद्यते न महेश्वरि ।
वारमेकं तु योऽधीते सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् ॥

कुल-वारे कुलाष्टम्यां कुहू-संक्रान्ति-पर्वसु ।
यश्चेमां पठते विद्यां तस्य सम्यक् फलं शृणु ॥
अष्टोत्तर-शतं जप्त्वा पठेन्नाम-सहस्रकम् ।
भक्त्या स्तुत्वा महादेवीं सर्व-पापात् प्रमुच्यते ॥
सर्व-पापैर्विनिर्मुक्तः सर्व-सिद्धीश्वरो भवत् ।
अष्टम्यां वा निशीथे च चतुष्पथ-गतो नरः ॥
माष-भक्त-बलिं दत्वा पठेन्नाम-सहस्रकम् ।
सुदश-वाम-वेद्यां तु मास-त्रय-विधानतः ॥
दुर्जयः काम-रूपश्च महा-बल-पराक्रमः ।
कुमारी-पूजनं नाम-मन्त्र-मात्रं पठेन्नरः ॥
एतन्मन्त्रस्य पठनात् सर्व-सिद्धीश्वरो भवेत् ।
इति ते कथितं देवि सर्व-सिद्धि-परं नरः ॥
जप्त्वा स्तुत्वा महादेवीं सर्व-पापैः प्रमुच्यते ।
न प्रकाश्यमिदं देवि सर्व-देव-नमस्कृतम् ॥
इदं रहस्यं परमं गोप्तव्यं पशु-सङ्कटे ।

इति सकल-विभूतेर्हेतु-भूतं प्रशस्तं,
पठति य इह मर्त्यश्छिन्नमस्ता-स्तवं च ।
धनद इव धनाढ्यो माननीयो नृपाणां,
स भवति च जनानामाश्रयः सिद्धि-वेत्ता ॥

॥ इति श्री त्रिश्वसार-तन्त्रे शिव-पार्वती-सम्वादे
श्रीछिन्नमस्ता-सहस्रनाम-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

क्रिया-पक्ष की शोध-पूर्ण प्रस्तुति

वार्षिक मूल्य ६५-००रु०

विस्तृत जानकारी हेतु सम्पर्क करें!

साधनोपयोगी साहित्य

हेतु

साधन-माला

पढ़ें।

विस्तृत जानकारी के लिए सम्पर्क करें-